ओ३म्

महीयसी संस्थापिका
डॉ० प्रज्ञा देवी जी

महर्षि पाणिनि-प्रभा

महीयसी संस्थापिका
अनुजा-आचार्या मेधा देवी

सृष्टि संवत् १,९७,२९,४९,११२ | संयुक्तांक अक्टूबर–दिसंबर, २०११ | वर्ष ५, अंक–४ | आश्विन–पौष, वि.सं. २०६८

सम्पादिका
आचार्या नन्दिता चतुर्वेदी
मो०- 9235539740

◆

सहसंपादिका
डा० प्रीति विमर्शिनी
मो०- 9235604340

◆

प्रकाशक
पाणिनि कन्या महाविद्यालय
पो०- महमूरगंज, तुलसीपुर,
वाराणसी– 221010 (उ०प्र०)
फोन : (0542) 6452340
6544340

◆

पत्रिका मूल्य
एक प्रति : 25/-
वार्षिक : 150/-
आजीवन : 1500/- (दस वर्ष)

प्रभा–रश्मयः

1. **वेद-वाणी–** प्रजा चाहती न्याय का द्वार – डॉ. स्वामी वेदव्रत सरस्वती 2–4
2. **सम्पादकीयम् –** अन्धेनेव नीयमाना यथान्धाः – आचार्या नन्दिता शास्त्री 5–8
3. **इतिवृत्तम् –** – डा. प्रीति विमर्शिनी 9–13
4. **महर्षि पाणिनि स्मारक मन्दिर उद्घाटन की ओर–** –14
   – डा. नन्दनम् सत्यम्
5. **नये साल के लिए एक जनवरी.....? –** 15-17
6. **वेदों की ओर लौटो –** – रवीन्द्र पोतदार 18–22
7 **ईश्वर कहाँ है? –** – प्रकाश आर्य 23–28
8. **दिल्ली में आयोजित 15वाँ विश्व संस्कृत सम्मेलन –** –28
9. **स्मृति शेष चौधरी मित्रसेन आर्य जी की पुण्यतिथि** 29–31
   17 दिसम्बर पर विशेष– – कैप्टन अभिमन्यु आर्य
10. **स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका –** आशा रानी व्होरा 32–35
11. **सामान्य रोगों की सुगम चिकित्सा –** – डा. अजीत मेहता 36–38
12. **हम भारत से क्या सीखें –** – प्रो. मैक्समूलर 39–40
13. **अर्जुनरावणीयम् –** – डा0 विजयपाल शास्त्री 39–40

◆

वेद-वाणी

प्रजा चाहती न्याय का द्वार–

प्रति यत्स्या नीथादर्शि दस्योरोको नाच्छा सदनं जानती गात्।
अध स्मा नो मघवञ्चर्कृतादिन्मा नो मघेव निष्षपी परा दाः॥

(ऋ. 1/104/5)

अर्थ– हे राजन्! (यत्) जो (स्या) वह (नीथा) न्यायमार्ग, धर्ममार्ग पर चलती प्रजा (अदर्शि) तुम्हें दिखाई दे रही है वह (दस्योः) डाकू के (ओकः) घर को (सदनं न) न्याय स्थल या शरणस्थली (जानती) जानती हुई (अच्छा गात्) प्राप्त हो सकती है अर्थात् प्रजाजन डाकुओं के गढ़ को ही राजसभा जान उसमें भी प्रवेश कर सकते हैं। (अध) ऐसी स्थिति में (मघवन्) हे ऐश्वर्य युक्त राजन्! (चर्कृतादित्) निर्धारित किये धर्ममार्ग से (नः) हमें ले चल और (निष्षपी मघा इव) जैसे परस्त्री या वेश्यागमन वाला व्यक्ति उस व्यसन में ही अपना धन नाश कर डालता है उसी प्रकार तू (नः) हमें (मा परादाः) अपने व्यसनों के कारण हमारा विनाश मत कर।

किसी भी राष्ट्र में राजा पिता तुल्य और प्रजा पुत्र के समान होती है, 'यथा राजा तथा प्रजा'। इसीलिये राजा में विष्णु का अंश माना जाता है।

जब राजा न्याय, धर्म एवं मर्यादा में रहते हुये पुत्रवत् प्रजा का पालन करता है तब प्रजा भी राजा को पितृ तुल्य मान उसके बताये आदेशों का पालन सहर्ष करती रहती है। जिस राजा के राज्य में शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते हैं वहाँ रामराज्य ही मानना चाहिये।

यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि जो मार्ग राज दरबार की ओर जाता है, उसी पर दस्यु अर्थात् प्रजा को लूटने वालों का भी घर है। कई बार ये लोग प्रजा को न्याय दिलाने का झूठा आश्वासन देकर अपने पक्ष में लोगों को कर लेते हैं। जब मत्स्यन्याय प्रचलित हो जाये अर्थात् जैसे छोटी मछली को बड़ी मछली खा जाती है, ऐसे ही जब बलवान् निर्बलों को सताने लगे, तब विद्रोह की प्रबल आन्धी उठ खड़ी होती है जो अच्छे बुरे का विचार न करते हुये मार्ग में जो भी कोई आता है उसे धराशायी करती

चली जाती है। ऐसे समय मगरमच्छ के आँसू बहाने वाले ये दस्यु उस भीड़ के अगुवा बन जाते हैं जिनके आगे सब मौन साध जाते हैं। यद्यपि समझदार लोग इस अराजकता की स्थिति से सन्तुष्ट भी नहीं दिखाई देते परन्तु 'मरता क्या न करता' के अनुसार जब इन्हें और कोई मार्ग नहीं सूझता तो वे भी इसे अपनी नियति मान इससे समझौता कर लेते हैं।

नीतिशास्त्र के जानने वाले कहते हैं कि राजा का एक पैर राज सिंहासन और दूसरा श्मशान में रहता है। यदि पहला पैर लड़खड़ा गया तो फिर उस राजा को श्मशान अर्थात् मृत्यु का आलिंगन करना ही पड़ता है।

वेद का मन्त्र उसे सावधान करते हुये कह रहा है– हे राजन्! **अध स्मा नो चर्कृतादित्** हमें निर्धारित न्याय और धर्म के मार्ग से ही लेकर चल। तेरी महत्त्वकांक्षा या निजी रुचि के कारण कहीं इस धर्म मर्यादा का उल्लंघन न हो जाये। स्मरण रहे शास्त्रकारों ने राजाओं के निम्न व्यसन बताये हैं–

पानमक्षा स्त्रियश्चैव मृगया च यथाक्रमम्।
एतत्कष्टतमं विद्यात् चतुष्कं कामजे गणे॥
दण्डस्य पातनं चैव वाक् पारुष्यार्थ दूषणे।
क्रोधजेऽपि गणे विद्यात् कष्टमेतत् त्रिकं सदा।
व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं कष्टमुच्यते।
व्यसन्यधोऽधो व्रजति स्वर्यांति व्यसनी मृतः॥

(मनु. 7,50,51,53)

कामज व्यसनों में बड़े दुर्गुण मद्यपान, जुआ खेलना, स्त्रियों का विशेष संग और शिकार खेलना, चे चार महा दुष्ट व्यसन हैं। बिना अपराध दण्ड देना, कठोर वचन बोलना और धनादि को फिजूल खर्च करना, ये तीन क्रोध से उत्पन्न हुये बड़े दुःखदायक कष्ट हैं।

दुर्व्यसन और मृत्यु में दुर्व्यसन में फंसने से मर जाना अच्छा है क्योंकि जो दुष्टाचारी पुरुष है वह अधिक दिन जियेगा तो अधिक पाप करके नीच गति को प्राप्त होगा। इसलिये विशेष रूप से राजा किन्तु सभी मनुष्यों को उचित है कि कभी मृगया और मद्यपानादि दुर्व्यसनों में न फंसें।

जब राजसभा में पक्षपात से अन्याय किया जाता है वहाँ अधर्म के चार विभाग हो जाते हैं। उनमें से एक अधर्म के कर्त्ता, दूसरा साक्षी, तीसरा सभासदों और चतुर्थ भाग अधर्मी सभा के सभापति राजा को प्राप्त होता है। जिस सभा में न्यायकारी राजा और सभासद् हों वहाँ केवल पापकर्ता को ही पाप लगता है। (मनु. 8,18)

विक्रोशन्त्यो यस्य राष्ट्राद् भ्रियन्ते

दस्युभिः प्रजाः। संपश्यतः सभृत्यस्य मृतः स तु न जीवति॥ (मनु. 7,173)

भृत्यों सहित जिस राजा के देखते हुये चिल्लाती हुई प्रजा चोरों से लूटी जाती है, वह राजा जीता नहीं, किन्तु मरा हुआ है।

इसलिये हे राजन्! न्याय से प्रजा का पालन कर। **मा नो मघेव निष्षपी परादाः** जैसे परस्त्री या वेश्यागमन करने वाला अपना सारा धन उस व्यसन में नष्ट कर देता है वैसे ही दुर्व्यसनों में फंसकर राष्ट्र का कोश लुटा, हम प्रजाजनों को विपत्ति के समुद्र में नहीं डाल देना। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा वंश सहित समूलोच्छेदन हो जाये।

– डॉ. स्वामी वेदव्रत सरस्वती
'वेद स्वाध्याय' पुस्तक से साभार

[*'प्रजा चाहती न्याय का द्वार' वेदवाणी के माध्यम से दिया गया सन्देश बहुत ही सामयिक है। आज जिस प्रकार अपने देश में अराजकता और भ्रष्टाचार व्याप्त है और जिस प्रकार उसके विरुद्ध एक संन्यासी द्वारा लोकोपकार हेतु पूर्ण राष्ट्रीय भावना से युक्त होकर जंग छेड़ी गयी है वह अत्यन्त आवश्यक व प्रशंसनीय है फिर भी कुछ लोगों के उकसाने पर इसी 14 जनवरी को दिल्ली में प्रेस कान्फ्रेंस के दौरान बाबा रामदेव के मुख पर काली स्याही फेंकने जैसा जो दुष्कार्य किया गया वह अत्यन्त ही निन्दनीय है। आज आवश्यकता है देश का हर नागरिक ऐसी हरकतों का विरोध करे और भ्रष्टाचार के विरुद्ध बाबा रामदेव जी द्वारा चलाये गये मुहिम में उनका भरपूर सहयोग करे।*

वेद वाणी का यह आलेख डॉ. स्वामी वेदव्रत सरस्वती का लिखा हुआ है जो कि उनके द्वारा लिखित 'वेद स्वाध्याय' नामक पुस्तक से उद्धृत है जो कि सत्यार्थ प्रकाश न्यास, कुरुक्षेत्र हरयाणा से आर्य जगत् के प्रखर वक्ता समाज के गौरव, तथ्यपूर्ण विवेचक डा. राजेन्द्र विद्यालंकार के कुशल निर्देशन में प्रकाशित है। मुझे पता चला इस न्यास के द्वारा इस प्रकार के अनेक ग्रन्थ पिछले प्रायः 15 वर्षों से प्रकाशित होते हैं जिनका प्रायः निःशुल्क वितरण स्वाध्यायी जनों के लिये किया जाता है। आप भी इस न्यास से जुड़ सकते हैं पुस्तकें मँगवा सकते हैं और किसी दुर्लभ जनसमाज के लिये लाभदायक पुस्तक को छपवाने की अभ्यर्थना कर सकते हैं और साथ ही अपना सहयोग इस न्यास को भेज सकते हैं जिससे अर्थ के अभाव में कभी इन पुस्तकों का प्रकाशन बन्द न होने पाये।

डा. स्वामी वेदव्रत सरस्वती जी द्वारा लिखित 54 पृष्ठों की बड़े साइज की यह पुस्तक स्वाध्यायी जिज्ञासुजनों के लिये बहुत ही उपादेय है। जिसमें चारों वेदों से विभिन्न विषयों के मन्त्र छाँटे गये हैं जो कि जीवन के अनेक पहलुओं से सम्बद्ध हैं, जीवन की अनेक समस्याओं के वैदिक समाधान हैं। इनके साथ आदरणीय स्वामी जी द्वारा इन मन्त्रों के माध्यम से जो वक्तव्य व सन्देश दिया गया है वह बहुत ही उचित, ग्राह्य, ज्ञानवर्धक व सरस है। आप भी इस पुस्तक को अवश्य मँगायें व दैनन्दिन स्वाध्याय से जुड़ें। इस पुस्तक के प्रकाशन में पाली राजस्थान के जिन राज पुरोहित दम्पति- श्रीमती किरण देवी एवं श्री गुलाब सिंह राज पुरोहित जी का सहयोग मिला है वे सचमुच हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं। प्रभु उनको उत्तम स्वास्थ्य यश समृद्धि से सदा परिपूर्ण रखे जिससे वे इस प्रकार के सामाजिक कार्यों में मुक्त हस्त हो सहयोग करते रहें। – सम्पा0]

सम्पादकीयम्

अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः–

अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः– मुण्डकोपनिषद् (1/2/8) का यह वचन कि– 'जैसे अन्धे को अन्धा रास्ता दिखा रहा हो' हम सबके जीवन में प्रायः घटित होता है जब हम एक दूसरे के पीछे बुद्धि और तर्क को एक तरफ रखकर चल पड़ते हैं। मुण्डकोपनिषद् का यह प्रसङ्ग– जहाँ दो प्रकार की विद्यायें बताई गई हैं एक परा विद्या दूसरी अपरा विद्या। जिसमें परा वह विद्या है जिससे उस अक्षर अविनाशी ब्रह्म की प्राप्ति होती है और अपरा वह विद्या है जिसके अन्दर चारों वेद उपवेद वेदांग से लेकर सारे संसार का ज्ञान समाहित हो जाता है। जिसके लिये नारद मुनि तक सनत्कुमार से कहते हैं कि भगवन्! मैंने चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) पढ़े हैं इतिहास-पुराण पढ़ा है गणित, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, भौतिकी, रसायन, प्राणिशास्त्र पढ़ा है देवविद्या, भूतविद्या, नक्षत्रविद्या, सर्पविद्या आदि बहुत कुछ पढ़ा है पर मैं केवल मन्त्रवित् अर्थात् शब्दवित् हूँ आत्मवित् नहीं। मैंने सुना है **तरति शोकमात्मवित्** (छान्दोग्य उ. 7/1/13) अर्थात् जो आत्मवित् होता है वही शोक सागर से पार होता है और इसीलिये मैं शोकाकुल हूँ। भगवन्! आप मुझे इस शोक से पार उतरने का उपाय बतायें। तात्पर्य निकला संसार की सारी विद्या यहाँ तक कि वेद शास्त्र पढ़ कर भी मनुष्य दुःख से पार नहीं हो सकता जब तक कि वह प्रैक्टिकल उस साधना के मार्ग पर नहीं चलता यह आवागमन का चक्र, जन्म-मृत्यु का फेर, उसका फंदा गले में लटका ही रहेगा। फिर जो बुद्धि और तर्क से परे **गतानुगतिको लोकः** का आश्रय लेकर आँख मूंद कर एक-दूसरे के पीछे चलता रहता है उसका तो कहना ही क्या?

इसी 2 जनवरी, 2012 को पूस की भयंकर ठण्ड में रात के 12 बजे किसी ने किसी को फोन लगा दिया प्रलय होने वाली है, भूकम्प आने वाला है जो इस रात सो गया वह सुबह होने तक पत्थर का बुत बना मिलेगा। एक ने दूसरे को दूसरे ने तीसरे को एक शहर से दूसरे शहर उन्नाव से लखनऊ, लखनऊ से कानपुर हरदोई, बाराबंकी, बनारस, फैजाबाद आदि राज्य के अनेक जिलों तक यह खबर पहुँच गई। लोग सड़कों पर निकल आये। ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों के साथ परिवार की महिलायें व पुरुष ठण्ड की परवाह न करते हुए सड़कों, गलियों व खुले मैदान की शरण में सम्भावित खतरे के इंतजार में किसी तरह आग जलाकर बैठे रहे। सब अपने इष्ट देव को याद करते रहे। भगवान् को मनाते रहे कि किसी तरह यह खतरा टल जाये। फिर भी बहुत से ऐसे भी नर थे जो इस खतरे को सुनने के बाद भी बिस्तर में दुबके आराम से सोते रहे कि जो होना होगा, होगा सुबह देखा जायेगा। मुम्बई के किसी लोकल चैनल से प्रसारित किसी कथित भविष्यवक्ता की वाणी द्वारा अग्रसारित इस अफवाह ने पूरे

पूर्वाञ्चल राज्य को **अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः** का जीवन्त उदाहरण बना दिया।

उपनिषद् काल और आज के काल में बहुत अन्तर है। जैसे पूर्व युग में भी रावण, कंस, दुर्योधन और जयचन्द थे और आज भी हैं, पर तब ये बुराईयों के नमूने थे जिन्हें इस प्रकार प्रचारित किया गया कि भविष्य में कोई ऐसा कर्म न करे नहीं तो वह भी इसी प्रकार बदनाम होगा किन्तु आज के रावणों व जयचन्दों से वे बहुत अच्छे थे। मुण्डकोपनिषद् के इस प्रसंग में शौनक जो कि बहुत बड़ा सेठ अथवा राजा था क्योंकि उसे वहाँ महाशालः कहा गया है– **शौनको ह वै महाशालः अङ्गिरसं विधिवदुपसन्नः पप्रच्छ** अर्थात् वह शौनक अङ्गिरा ऋषि के पास शिष्य बुद्धि जिज्ञासु बुद्धि से पहुँचा और पूछने लगा– **कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति?** किसके जान लेने पर यह सब कुछ जाना जाता है। वहाँ अंगिरा ऋषि ने परा और अपरा इन दो विद्याओं का ही नाम लिया कि इनके जानने से सब कुछ विज्ञात हो जाता है। वहाँ यह भी कहा कि सतयुग में यद्यपि सब कुछ ठीक था किन्तु त्रेतायुग में धीरे-धीरे लोग वेदों में वर्णित यज्ञों को ही श्रेष्ठतम कर्म मानने लगे और कहने लगे कि–

तदेतत्सत्यं..... तानि त्रेतायां बहुधा संततानि।
तान्याचरथ नियतं सत्यकामा एष वः पन्थाः सुकृतस्य लोके॥

(मु.उ. 1/2/7)

अर्थात् ऐ सत्यकाम! सत्य की कामना करने सत्यसंकल्प वाले लोगो! तुम इन वेद प्रतिपादित कर्मों (यज्ञों) का ही आचरण करो यही तुम्हारे सुकृत का पथ है, लोक है। पर ध्यान रहे! यज्ञ की ये आहुतियाँ श्रद्धा से विधि पूर्वक प्रतिपादित होनी चाहियें अन्यथा वे हमारे सातों लोकों के पुण्यों को नष्ट कर देंगी। वहाँ यह भी कहा कि– यजमान के द्वारा दी गई ये आहुतियाँ, सूर्य की रश्मियों के साथ एकाकार होती हुई ये यज्ञ की लपटें, मानों यजमान को कह रही हैं कि– **एह्येहीति..... एष वः पुण्य; सुकृतो ब्रह्मलोकः** आओ! आओ! यही तुम्हारा सुकृत है पुण्य है जो तुम्हें ब्रह्म लोक तक पहुँचायेगा, पहुँचने का मार्ग दिखायेगा किन्तु ध्यान रखना! यदि तुमने इस यज्ञ को कर्मकाण्ड को ही सब कुछ मान लिया और इसे ही श्रेय मानकर प्रसन्न होते रहे तो तुम यहीं रह जाओगे भवसागर से पार नहीं उतर पाओगे उस अमृत मोक्षरूपी आनन्दधाम के अधिकारी नहीं बन पाओगे क्योंकि यह तुम्हारी नौका, नौके की यह यज्ञरूपी पतवार बहुत दृढ़ नहीं है–

प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढा जरामृत्युं ते पुनरेवापि यन्ति॥

(मु. 1/2/6)

और जो ऐसा मानते हैं और दूसरों को भी यही मार्ग बताते हैं वे स्वयं अविद्या में पड़े हुवे हैं फिर भी स्वयं को धीर और पण्डित मानते हैं। ऐसे लोग संसार की ठोकरें खाते हुए भी स्वयं को कृतार्थ मान मूढ़

बने उसी प्रकार घूम रहे हैं–

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितम्मन्यमानाः।
जंघन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः॥

अर्थात् जैसे एक अन्धा दूसरे अन्धे को रास्ता दिखा रहा हो। तो यह उक्ति अंगिरा ने शौनक को शास्त्र और व्यवहार की यथार्थता को समझाने के लिये इस रूप में प्रयुक्त की थी जो आज के इस प्रकार के गल्पों (अफवाहों) को सत्य मानकर उसके पीछे चलने वाले सभी लोगों के लिये पूर्ण सटीक बैठती है।

यही क्या? आज मूर्तियों को भोग लग रहा है, गणेश जी दूध पी रहे हैं, भगवान् जगन्नाथ बीमार पड़ गये हैं, उन्हें परवल का जूस व काढ़ा पिलाया जा रहा है, विश्व कल्याण के लिये मिट्टी को रौंद-रौंद कर लाखों शंकर भगवान् बनाये जा रहे हैं और पूजन करने के बाद गंगा में बहाया जा रहा है। गंगा मैय्या सबके पाप धो रही हैं कोई भगवान के नाम पर चादर चढ़ा रहा है, उन्हें प्रसन्न करने के लिए बलि दे रहा है, उनके नाम पर व्रत कर रहा है, कभी शनि का प्रकोप हो गया है, कभी किसी की साढ़े साती चल रही है, कई तो काशी में मरने के लिए आते हैं कि यहाँ मरने से मुक्ति होती है, घर के देवी-देवता समान माता-पिता घर के बाहर हो गये हैं, उनके स्थान पर मन्दिर में सजे खिलौनों को खिलाया जा रहा है, मरे हुओं को पानी पिलाया जा रहा है, पण्डित जी को भोजन खिला रहे हैं कि हमारे पितरों तक पहुँच जायेगा आदि कितनी बाते हैं जो हमें अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः का उदाहरण बनाती हैं पर हम हैं कि चले जा रहे हैं कोई इनके विरुद्ध बोले समझाने का प्रयास करे तो वही इनकी आस्था का बाधक शत्रु बन जाता है। शायद हम उपनिषत्कारों ऋषि-मुनियों से भी बड़े हो गये हैं। अस्तु।

कभी यास्क ने निरुक्त 13/12 में इस प्रसंग को दोहराया था कि– जब धीरे-धीरे इस धरती से ऋषि परम्परा समाप्त होने लगी तो मनुष्य चिन्तित होकर देवों के पास गये और कहने लगे कि **को न ऋषिर्भविष्यति** अब हमारे मध्य कौन ऋषि बनकर हमें ज्ञान देगा तो देवों ने कहा कि अब तुम्हारे मध्य तर्क ही ऋषि होगा। **तेभ्य एतं तर्कमृषिं प्रायच्छन्** जीवन में जब कभी तुम्हारे बीच भ्रमात्मक स्थिति पैदा हो तुम उसे तर्क की कसौटी पर कस कर देखना अपने आप समाधान हो जायेगा।

उसी तर्क की प्रेरणा आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व सन् 1838 में महाशिवरात्रि के दिन बालक मूलशंकर के हृदय में तब हुई जब उसे फाल्गुन कृष्ण चर्तुदशी को शिव का माहात्म्य बताकर महाशिवरात्रि का व्रत रखने को कहा गया पर अर्धरात्रि में ही जब शिव जी के ऊपर चूहों ने ताण्डव शुरू कर मल-मूत्र त्याग भी कर दिया तो मूलशंकर के हृदय में तूफान मच गया कि आखिर यह कैसा त्रिशूलधारी शिव है कि जो, इस छोटे से चूहे तक को अपने ऊपर से नहीं हटा सकता वह अपने पिता से इस प्रश्न को लेकर भिड़ गया

पर कुछ समाधान न पाकर घर बार छोड़कर जंगलों में निकल गया और अन्ततः मूलशंकर के इस तर्क ने उसे सच्चे समाधान तक पहुँचाया और उसे यह निश्चय करा दिया कि यह प्रस्तर मूर्ति शिव नहीं है शिव नाम तो उस निराकार परब्रह्म परमेश्वर का है जिसका अपना निज नाम ओ३म् है। शिव का उल्लेख तो शास्त्रों में परमेश्वर की तीन शक्तियों के रूप में किया जाता है। स्वयं विष्णु पुराण में लिखा है–

शक्तयो यस्य देवस्य ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाः।
सर्गस्थित्यन्तकरणीं ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकां स संज्ञां याति भगवान् एक एव जनार्दनः॥

(विष्णु पु.1/2/66)

अर्थात् जिस ओंकार ब्रह्म की ब्रह्मा विष्णु तथा शिव ये तीन प्रधान शक्तियाँ हैं वही परमेश्वर सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति तथा संहार करते समय क्रमशः इन तीन संज्ञाओं को प्राप्त करता है। स्वयं आदि शंकराचार्य जी श्वेताश्वतरोपनिषद् (1/12) का भाष्य करते हुए शिव धर्मोत्तर के इन श्लोकों को उद्धृत करते हैं–

शिवमात्मनि पश्यन्ति प्रतिमासु न योगिनः॥
आत्मस्थं यः परित्यज्य बहिःस्थं यजते शिवम् ॥
हस्तस्थं पिण्डमुत्सृज्य लिह्यात् कूर्परमात्मनः॥ सर्वत्रावस्थितं शान्तं न पश्यन्तीह शंकरम्।

अर्थात् योगिजन शिव के दर्शन आत्मा में करते हैं मूर्तियों में नहीं किन्तु जो व्यक्ति आत्मा में स्थित शिव का परित्याग कर बाहर पूजन करता है वह मानो अपने हाथ में रखे भोजन को न खाकर अपनी हथेली को चाटने में लगा है। कठोपनिषद् (2/2/12) में भी यही कहा कि–

तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम्।

अर्थात् जो उस परमेश्वर को आत्मा में स्थित देखते हें वे ही शाश्वत शान्ति को प्राप्त करते हैं। योगिराज श्री कृष्ण जी महाराज ने भी यही कहा कि– अन्य सारे विकल्पों को छोड़कर निश्चय पूर्वक मन को स्थिर करके आत्मा में स्थित उस परमेश्वर के दर्शन से ही योगी मनुष्य शान्त होता है। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है उसे अपनी आत्मा में ही ढूँढना सम्भव है।

वस्तुतः वह शिव शंकर परमेश्वर तो सर्वत्र विद्यमान है। महाशिवरात्रि का पर्व सन्निकट है हम अपने सम्मानित शास्त्रों के साथ-साथ तर्क ऋषि को अपनाकर सच्चे शिव के उपासक बन सकें तभी हम ऋषि परम्परा के संवाहक, वैदिक आज्ञा के पालक, आत्मिक कल्याण के साथ साथ विश्व कल्याण के पथ प्रदर्शक भी बन सकेंगे अन्यथा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः तो हम बने हुए ही हैं।।

● **– आचार्या नन्दिता शास्त्री**

इतिवृत्तम्

– डॉ० प्रीति विमर्शिनी

''आज से 62 वर्ष पूर्व 14 अगस्त, 1947 की रात्रि लगभग 25000 लोगों का जत्था भारत विभाजन के पश्चात् लाहौर से भारत की ओर बढ़ा जिसमें रास्ते में बहुत से लोग मुसलमानों द्वारा मारे गये, किसी का हाथ कटा, किसी का पैर धीरे-धीरे संख्या घटती गई भारत आते-आते कुछ पूरी तरह से ठीक कुछ क्षत-विक्षत 1100 लोग शेष रह गये उन बचे हुए लोगों में एक सौभाग्यशाली मैं भी था जो शायद इसलिये जीवित रह गया कि इस पवित्र स्थान तथा आप जैसी देवियों के दर्शन करके धन्य हो सकूँ। सच! आज मैं धन्य हो गया मेरा जीवन सार्थक हो गया।'' ये वाक्य हैं 7 नवम्बर 2011 को पाणिनि कन्या महाविद्यालय के दर्शनार्थ पंजाब से आये हुए ''नेशनल प्रेसिडेन्ट काउन्सिल फोर टीचर एजुकेशन'' **श्री देवराज जी विज** जालन्धर के जो कि विद्यालयीय शिक्षा एवं अन्यान्य गतिविधियों में रत विद्यालयीय ब्रह्मचारिणियों को देखकर अत्यधिक श्रद्धान्वित नतमस्तक तथा भाव विगलित थे। आपने थोड़े से समय में ही अपनी जोशीली कविताओं से कन्याओं को नई प्रेरणा, नव चेतना एवं नव संकल्प से युक्त कर दिया।

15 नवम्बर, 2011 प्रातः साढ़े सात बजे दूरभाष पर ध्वनि आती है आप डॉ. प्रीति विमर्शिनी जी बोल रही हैं, मैं 1-2 घंटे में आपका विद्यालय देखने आ रहा हूँ तथा कन्याओं को भी उद्‌बोधन दूँगा। मेरी सादर सम्मानित स्वीकृति प्राप्त कर लगभग 11 बजे आपका पदार्पण हुआ आपने कन्याओं को उद्‌बोधन भी दिया विद्यालय भ्रमण तथा ब्रह्मचारिणियों से वार्त्तालाप के पश्चात् प्रशंसा में आपके जो भाव प्रस्फुरित हुए वे विराम लेने का नाम ही नहीं ले रहे थे जो कि यहाँ से जाने के बाद भी दूरभाष के माध्यम से निम्न शब्दों में प्रस्फुटित होते रहे–

''यह केवल संस्कृत पढ़ाने वाला गुरुकुल मात्र ही नहीं बल्कि एक दर्शनीय स्थल के रूप में मूर्तिमान् रूप ले रहा है। जो व्याकरण के सूर्य **पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु** व उनकी परम विदुषी शिष्या **आचार्या डॉ. प्रज्ञा देवी** तथा **आचार्या मेधा देवी** द्वारा संस्थापित, पुष्पित, पल्लवित एक ऐसे ऐतिहासिक स्मारक के रूप में निर्मित हो रहा है। जहाँ की दीवारें पाणिनि के सूत्र बोल रही हैं एवं ऋषि के कार्यों का दिग्दर्शन करा रही हैं। देश विदेश की कन्याओं को व्याकरण पण्डिता बनाने वाला यह गुरुकुल आर्य समाज का गरिमापूर्ण तीर्थ स्थल है।

मैंने जब अपने इस गुरुकुल को देखा तो, ब्रह्मचारिणियों को उद्‌बोधन किया तो, आचार्या **डॉ. प्रीति विमर्शिनी जी** से विचार-विर्मश किया तो गद्-गद् हो गया। *मैंने तो काशी का घाट देखा न*

ठाट-बाट देखा देखा तो गुरुकुल का ऐतिहासिक स्मारक रूप ललाट देखा।'' इन भावों को मूर्तरूप देने वाले थे **डा. वीरपाल जी विद्यालङ्कार** गाजियाबाद। ये एक दो उदाहरण मात्र हैं।

सुधी पाठक वृन्द!

जिन देवबालाओं एवं जिस देवालय को देखकर यहाँ आने वाले प्रत्येक महानुभावों के मुखारविन्द से अनायास ही इस प्रकार के भाव प्रस्फुटित होते हैं वो देवबालायें या देवालय अनायास ही नहीं बन गये इनके निर्माण के पीछे, त्यागी, तपस्वियों के त्याग, तपस्या की एक सुदीर्घ सुदृढ परम्परा रही है आज भी है और आगे भी रहेगी ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। क्योंकि आज भी इन तपस्विनी ब्रह्मचारिणियों के अन्दर उन देवत्व युक्त भावों का बीजारोपण विदुषी **आचार्या नन्दिता शास्त्री जी** द्वारा समय-समय पर होता ही रहता है जिन भावों का बीजारोपण पूज्य पाद गुरुवर्य **पं0 ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी** द्वारा स्वनामधन्या आर्य जगत् की विदुषीमणि आचार्या द्वय के हृदयों में किया गया था उसके बाद से यह परम्परा आज तक अक्षुण्ण रूप से अविराम गति से चली आ रही है फलस्वरूप वे बीज अंकुर बनकर आज एक वटवृक्ष के रूप में शाखा-प्रशाखाओं सहित पल्लवित एवं पुष्पित हो रहे हैं। आज मकर संक्रान्ति के शुभ पर्व पर जिसमें सूर्य धनु राशि से मकर राशि की ओर संक्रमण करता है और सूर्य की गति उत्तरायण होती है यह पर्व देवत्व का सात्विकता का उन्नति का प्रतीक है। यज्ञ के अनन्तर आचार्या जी ने सभी शिष्याओं को पर्व का सन्देश एवं आशीर्वाद देते हुए जो उद्बोधन दिया वह वस्तुतः सभी के लिए संरक्षणीय मननीय विचारणीय तथा पालनीय हैं–

यह विद्यालय आपकी मातृभूमि है यहीं के अन्न-जल-वायु से आपके रक्त के एक-2 कण का निर्माण हुआ है और हो रहा है अतः आपके ऊपर इस विद्या-भूमि का, कुलभूमि का, मातृ-भूमि का ऋण है। यह मातृभूमि है यहीं से दूसरा जन्म लेकर मनुष्य द्विज बनता है। इस ऋण से उऋर्ण होने के लिए आप को भी अपना जीवन समर्पित करना होगा, वेद विद्या एवं वैदिक संस्कृति के प्रचार के लिये, आर्षपाठ विधि के संरक्षण संवर्धन के लिए, ऋषि के वैदिक सिद्धान्तों के अनुरूप समाज एवं राष्ट्र के निर्माण के लिए जो इस कुलभूमि के मूल उद्देश्य हैं। आपको आगे बढ़ना होगा, विदुषी बनना होगा, त्यागियों तपस्वियों की सुदीर्घ सुदृढ परम्परा से जुड़ कर उसकी एक मजबूत कड़ी आपको भी बनना होगा। जो अधिक से अधिक गुरुकुलों के निर्माण से ही सम्भव है। आप सभी देश के कोने-कोने से आई हैं आप सभी अभी से अपना लक्ष्य निर्धारित करें कि हम अपने-2 नगरों में गाँवों में प्रान्तों में गुरुकुल का निर्माण करेगें। छोटी हों चाहे बड़ी आप सबमें वह सामर्थ्य है आप अपने सामर्थ्य को पहचानो, अपनी अलग पहचान बनाओ, औरों का अनुकरण मत करो, जो अन्धाधुन्ध अनुकरण कर उनमें मिलना चाहते हैं वे मानों अपनी पहिचान को अपने अस्तित्व को समाप्त कर देते हैं। आप का सौभाग्य है जो आप गुरुकुलीय आर्ष परम्परा में जी

रहे हैं अध्ययन कर रहे हैं। आपके उठने-बैठने, खाने-पीने, ओढ़ने-पहनने, बोलने आदि हर व्यवहार में गुरुकुलीयता की छाप होनी चाहिए इत्यादि।

महानुभावो! आप सोच सकते हैं कि जहाँ ऐसे प्रेरणादायक उद्बोधन बाल्यावस्था से ही प्राप्त हों वहाँ ये परम्परा समाप्त कैसे हो सकती है? वहाँ अद्भुत तपस्विनी देवबालायें तो तैयार होंगी ही जिन को देखने के लिए देवता भी लालायित रहते हैं–

तं जातं द्रष्टुम् अभिसंयन्ति देवाः।

(अथर्व.11/5/3)

प्रातः चार बजे ब्राह्ममुहूर्त की वेला से लेकर रात्रि पर्यन्त सन्ध्या-यज्ञ, योग-साधना, वेदाभ्यास सूत्राभ्यास सहित पाणिनि व्याकरण का साङ्गोपांग अर्थ ज्ञान कराते हुए अन्यान्य विषयों का भी नियमित अध्ययन अध्यापनादि से युक्त पूर्ण अनुशासित सुव्यवस्थित दिनचर्या कन्याओं के निर्माण में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

विभिन्न प्रतियोगिताओं में पाणिनि की धूम–

कन्याओं के चहुँमुखी विकास के लिए हम उन्हें विभिन्न प्रतियोगिताओं में भी भाग दिलवाते हैं तथा कन्याएँ भी पूर्ण मनोयोग से परिश्रम पूर्वक भाग लेती हैं और पूर्ण सफलता प्राप्त करके प्रथम स्थान के सम्मान को प्राप्त करती हैं। विगत तीन मासों में विभिन्न प्रतियोगिताओं में कन्याओं ने गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया जिनमें उल्लेखनीय है–

'अखिल भारतीय व्यास महोत्सव में – 'श्रेयोमार्गोपदेष्टा तु लोककल्याणहेतवे। व्यासं विहाय कः शक्तः दृश्यते जगतीतले' इस विषय पर आधारित संस्कृत वाद-विवाद प्रतियोगिता में विद्यालय की मेधाविनी छात्रा ब्रह्मचारिणी **प्रतिभा आर्या** (राँची झारखण्ड) ने प्रथम स्थान प्राप्त करके अपने विद्यालय ही नहीं अपितु काशी के भी गौरव को संवर्धित किया। **प्रह्लाद राय झुनझुनवाला स्मृति गीता प्रतियोगिता** में 'गीता में कर्मयोग' विषय पर आधारित भाषण प्रतियोगिता में **ब्र० आकृति आर्या** (उमरिया, मध्य प्रदेश) ने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया। **चातुर्वेद संस्कृत संस्थानं** की ओर से आयोजित प्रतियोगी परीक्षा में ब्रह्मचारिणी **श्रुति** (आगरा) एवं **ब्र. नूतन आर्या** (रायबरेली) ने गोल्ड मैडल एवं विशिष्ट पुरस्कार प्राप्त किया।

सुभाषित अर्थ प्रतियोगिता में **ब्र. कस्तूरी आर्या** (हैदराबाद), **दीपाली आर्या** (समस्तीपुर) एवं **दिव्या आर्या** (बोकारो) ने अपने-अपने वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त किए। ये सभी मेधाविनी कन्याएँ अपने जीवन में अधिकाधिक परिश्रम करती हुई जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता को प्राप्त करें तथा आर्ष वैदिक ज्योति को निरन्तर प्रज्वलित रखें यही हमारा हृदय से आशीर्वाद है।

वैदिक प्रचार यात्रा–

कन्याओं के सर्वाङ्गीण विकास में वैदिक प्रचार यात्राओं का भी महत्त्वपूर्ण योगदान होता है जिसके माध्यम से कन्यायें वेद प्रचार की कला को सन्निकटता से सीखती हैं। ऐतिहासिक, भौगोलिक दर्शनीय स्थलों का अवलोकन कर अपना ज्ञान संवर्धन करती हैं साथ ही इसके माध्यम से

वेदोपदेश द्वारा जन समाज भी लाभान्वित होता है।

विगत 3 मासों में अनेक महत्त्वपूर्ण यात्रायें हुईं। जिनमें सर्वप्रथम 12 से 16 अक्टूबर तक **वैदिक साधना आश्रम तपोवन देहरादून** जहाँ ऋग्वेद महायज्ञ का कार्यक्रम विद्यालय के अनन्य हितैषी विद्यालयीय आर्ष परम्परा के प्रति पूज्य गुरुवर्य के समय से ही आस्थावान् पवित्र स्नेही विद्यालय के प्रति अनन्त श्रद्धा एवं स्नेह रखने वाले वैदिक साधना आश्रम के अध्यक्ष **श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी** की प्रेरणा से प्रमुख वक्ता के रूप में सादर सप्रेम आमन्त्रित होकर गईं आचार्या नन्दिता शास्त्री जी के वेदामृत का सभी साधकों ने मन्त्रमुग्ध हो रसपान किया। तथा विद्यालयीय ब्रह्मचारिणियों के वेदपाठ, भजन आदि से भी सभी मुग्ध थे सभी ने कन्याओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की!

द्वितीय यात्रा अहमदाबाद की थी इस कार्यक्रम का आयोजन **श्री अशोक जी भाई बोपट** की प्रेरणा से **श्री डाह्या भाई बोपट** परिवार ने मिलकर अपने घर पर ही किया था। जहाँ प्रातःकाल से लेकर रात्रि पर्यन्त पूरा गृह वैदिक मन्त्रोच्चार एवं वैदिक विद्वानों के विद्वत्तापूर्ण मधुर उपदेशों से गुञ्जायमान रहता था। बहुत ही स्नेही अतिथि सेवी आदर्श विशाल परिवार है यह। आचार्या जी के एक निवेदन पर आप सब ने विद्यालय के सहयोग के लिये अपनी समिति व पारिवारिक जनों के सहयोग से अपेक्षा के अनुरूप सहायता राशि एकत्र कर आनन्दित कर दिया।

तृतीय यात्रा दिसम्बर मास में ही आर्य जगत् के युवा सेनानी आर्यरत्न **श्री वाचोनिधि जी आर्य** के नेतृत्व में आर्यसमाज गान्धीधाम की रही। आर्यसमाज गान्धीधाम व वहाँ के सम्मानित अधिकारी जनों का विद्यालय के साथ आत्मीयतापूर्ण सम्बन्ध व सहयोग बराबर बना रहता है। इस वर्ष भी आपकी कमेटी ने यथापूर्व सहयोग देते रहने का निर्णय लेकर अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है। उनकी कमेटी के सभी सदस्य धन्यवाद के पात्र हैं।

सबसे अधिक प्रभावोत्पादक महत्वपूर्ण कार्यक्रम **श्री प्रकाश जी आर्य** 'एडवोकेट' द्वारा 27 से 31 दिसम्बर तक समायोजित **संगीतमय वेदकथा** थी। जिसमें आचार्या नन्दिता शास्त्री जी द्वारा मध्याह्न 2 से 5 बजे तक होने वाली संगीतमय वेदकथा को सुनने वाले श्रद्धालुओं का उमड़ता हुआ जन सैलाब देखते ही बनता था। असंख्य नर-नारियों ने इस कथा का रसास्वादन किया। साथ ही प्रतिदिन रात्रिकालीन सभा में विभिन्न विषयों पर एक एक वैदिक विद्वानों के प्रवचन का भी लाभ उठाया। आदरणीय भ्राता श्री प्रकाश जी आर्य द्वारा इस बृहद् रोचक वैदुष्यपूर्ण कार्यक्रम का आयोजन जो प्रति दो वर्ष में सम्पन्न होता है स्वयं में एक उदाहरण है। क्या शोभायात्रा, क्या वेदकथा, क्या गायत्री महायज्ञ, क्या रात्रिकालीन किसी एक विषय पर किसी एक विद्वान् का उद्बोधन, इसी के साथ दूर-दराज से आये आगन्तुकों व श्रोताओं के भोजन-जलपान की व्यवस्था, यज्ञ में शुद्ध गाय का घी तथा स्वनिर्मित सामग्री का प्रयोग सभी कुछ

सराहनीय है। **इन सबके पीछे कारण श्री प्रकाश जी आर्य का सहृदय चिन्तन व गम्भीर स्वाध्याय है।** स्थानीय जनों में उनकी पकड़ है उन पर उनका अधिकार है। अपने महाविद्यालय के प्रति भी आपकी पूर्ण निष्ठा है विद्यालय के सहयोग हेतु आपने थोड़े से संकेत में ही लोगों को प्रेरित कर धनसंग्रह कराया यह आपकी उदात्तता है।

इन सभी वैदिक यात्राओं में विद्यालयीय जिन ज्येष्ठ कनिष्ठ ब्रह्मचारिणियों ने भाग लिया। उनके नाम हैं– प्रिय जाह्नवी, ब्र. ज्योति आर्या, ब्र. महिमा आर्या, ब्र. जागृति आर्या, रजिता आर्या, ब्र. विद्या-अर्चा-निधि आर्या, कौमुदी-श्रीतेजा नन्दनम्, दिव्या-सुधा आर्या, सावित्री-विजया एवं गायत्री आर्या। ये सभी ब्रह्मचारिणियाँ वेद भक्त ऋषि भक्त वेद पथानुगामिनी वेद प्रचारिका बनें यही प्रभु से प्रार्थना तथा आशीर्वाद है।

सुचिन्तक महानुभाव!

देवबालाओं के सुरक्षित निवास हेतु देवालय के निर्माण, संरक्षण, संवर्धन में तथा भौतिक संसाधनों की आवश्यकता पूर्ति हेतु योजनाओं को मूर्त्तरूप देने के लिये अनिवार्य आवश्यकता अर्थ की होती है जिस की आपूर्त्ति अर्थसम्पन्न देवत्व भावना से युक्त दानी महानुभावों के सहयोग से ही हो पाती है। और इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु भी ये यात्रायें बहुत महत्त्वपूर्ण होती हैं। इसी देवत्व भावना से युक्त दानियों की श्रृंखला में **पं. क्षेमकरण दास त्रिवेदी जी** के परिवार से **श्रीमती इन्दु-ओंकार श्रीवास्तव** हॉलैण्ड ने अपने विद्यालय में विज्ञान प्रयोगशाला के निर्माण हेतु अपना अपेक्षित अमूल्य सहयोग प्रदान किया। आपका तथा आपके परिवार का अपने महाविद्यालय से बहुत पुराना परिचय व सम्बन्ध रहा है। आज भी अपने बेटी निधि श्रीवास्तव का विवाह जब आपने वाराणसी में अपनी पुरानी स्मृतियों को संजोते हुए सम्पन्न कराया तो एक बार फिर वे सभी स्नेह के सूत्र ताजे हो गये, बहुत अच्छा लगा। दामाद के रूप में ऐडवर्ड भी इतने अनुकूल व भारतीय परम्पराओं का सम्मान करने वाले मिले कि क्या कहना? हम सभी अभिभूत हैं। दूसरा नाम है– पूज्या माता **श्रीमती कौशल्या आर्या जी** का। आप का स्नेह आशीर्वाद तो इस विद्यालय के प्रति रहता ही है पर धीरे-धीरे आपने परिवार को भी इस पवित्र कार्य में जोड़ा है। आपकी सुपुत्री **श्रीमती अंशुलि आर्या** जो पटना में बिहार विकास प्राधिकरण तथा इण्डस्ट्री विभाग की मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं अब अपनी माँ की ही प्रेरणा से बराबर अपना यथाशक्य योगदान विद्यालय के प्रति करने में लगी हैं जो कि सराहनीय है।

इसी क्रम में आदरणीय पितृतुल्य **श्री त्रिलोकी नारायण मिश्र** जी का नाम भी श्रद्धापूर्ण हृदय से उल्लेख करना चाहूँगी। आप निरन्तर इस विद्यालय की उन्नति के बारे में चिन्तन करते रहते हैं और अपना उत्तम सहयोग भी प्रेषित करते रहते हैं। परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना है आप सबका यह स्नेह आशीर्वाद हमेशा हमारा सम्बल बना रहे और यह विद्यालय दिनदूनी रात चौगुनी उन्नति करता रहे। तथा आप सभी सपरिवार स्वस्थ दीर्घ यशस्वी जीवन प्राप्त करें।

(शेष भाग पृष्ठ 35 पर)

महर्षि पाणिनि स्मारक मन्दिर उद्घाटन की ओर

संयोजक प्रमुख–
डॉ. नन्दनम् सत्यम् (स्वतंत्रता सेनानी)

हमारा विद्यालय लगभग 41 वर्ष से कार्यरत है। जिसमें–

(1) लगभग 20 वर्षों का स्वप्न।
(2) 6 वर्षों का अविरल परिश्रम।
(3) करोड़ों रुपयों का व्यय।
(4) देश व्यापी दान-दाताओं का सहयोग।

ये सब मिलाकर एक अद्भुत सुन्दर कलात्मक वैज्ञानिक केन्द्र महर्षि पाणिनि स्मारक मन्दिर का निर्माण हुआ। इस मन्दिर में भारत की समस्त कलाकृतियाँ (काकतीय, चोल, पल्लव, गान्धार, नागर, राजस्थानी आदि) समाहित हैं। यह एक अद्भुत श्रद्धा का केन्द्र और भारतीय विद्या-विज्ञान-कला वैभव को बढ़ाने वाला है। यह मन्दिर भारत देश की प्राचीनतम सांस्कृतिक नगरी पवित्र काशी क्षेत्र की शोभा को चार चाँद लगा रहा है यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

काशी नगरी में पण्डित मदन मोहन मालवीय ने अविरल परिश्रम से बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय को खड़ा किया है और देश के दक्षिण प्रान्त में स्वामी विवेकानन्द के प्रति श्रद्धा का केन्द्र एक दिव्य कलात्मक भवन विवेकानन्द स्मारक केन्द्र के रूप में माननीय एकनाद राणदे ने अपने जीवनकाल में सतत परिश्रम से निर्मित किया है यह भारत के लिए गर्व कारक है।

आज पाणिनि कन्या महाविद्यालय के प्राङ्गण में भी इसी प्रकार एक महर्षि **पाणिनि स्मारक मन्दिर** का निर्माण हुआ है यह एक अनोखा दिव्य स्मृति केन्द्र और व्यक्ति निर्माण केन्द्र भी है। इस भवन में 72 कला स्तम्भ निर्मित हैं जिसमें अद्भुत शिल्प वास्तु कला दर्शनीय है। इसमें कुड्डी से निर्मित खिड़की की सुन्दरता देखने योग्य है। यहाँ महर्षि पाणिनि द्वारा विरचित पाणिनि अष्टाध्यायी के 4000 सूत्रों का शिलापट्ट दीवारों में चारों तरफ अंकित किया गया है। यह कारीगर की कुशलता को साबित करता है जो अत्यन्त जटिल कार्य है। इस मन्दिर के चारों ओर पत्थर से निर्मित 40 ज्ञानदीप स्तम्भ हैं जो हमारी ऋषि परम्परा का स्मारक हैं इसलिये हमने इसको ज्ञानदीप नाम दिया है। अब सभागार में ऊपर छत की ओर नक्काशी का कार्य जारी है।

मन्दिर में अन्तिम चरण का कार्य अभी शेष है। इस अवस्था में संयोजक प्रमुख के नाते मैं एक बार फिर हमारे देश के संस्कृति प्रेमी बन्धु विद्या कला पोषकों से विनम्र निवेदन करना चाहता हूँ कि अभी होने वाले शेष कार्य के लिए 50,0000 रु. की अत्यावश्यकता है। इस पूरे कार्य में देश के कोने-कोने से जुड़े आप सब दानदाताओं से मैं सहयोग के लिए अपील करता हूँ व आपका हार्दिक सम्मान स्वागत करता हूँ। इस राष्ट्र निर्माण के कार्य में आप सब भागीदार बनें यह आपके लिये मातृ ऋण, ऋषि ऋण से मुक्त होने का स्वर्णमय अवसर है। धन्यवाद।

महर्षि पाणिनि मन्दिर निर्माण समिति, तुलसीपुर,
वाराणसी, सम्पर्क सूत्र– 09235606340

नोटः– आप अपना सहयोग, चेक, ड्राफ्ट, कैश उपरोक्त पते पर भेज सकते हैं एवं महर्षि पाणिनि मन्दिर निर्माण समिति खाता संख्या– 30121859712 शाखा– शिवाजी नगर भारतीय स्टेट बैंक वाराणसी में जमा भी कर सकते हैं। हमारा ई-मेल है– info@paninigurukul.in, यह संस्था आयकर मुक्त है।

नये साल के लिए एक जनवरी.....?

एक जनवरी के नजदीक आते ही जगह-जगह हैप्पी न्यू ईयर के बैनर व होर्डिंग लगने लगते हैं। जश्न मनाने की तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। होटल, रेस्तराँ व पव इत्यादि अपने-अपने ढंग से इनके आगमन की तैयारियाँ करने लगते हैं। पोस्टर व कार्डों की भरमार के साथ दारू की दुकानों की भी चाँदी कटने लगती है। कहीं-कहीं तो जाम से जाम इतने टकराते हैं कि घटनाएँ दुर्घटनाओं में बदल जाती हैं और मनुष्य-मनुष्यों से तथा गाड़ियाँ-गाड़ियों से भिड़ने लगती हैं। रात-रात भर जाग कर नया साल मनाने से ऐसा प्रतीत होता है मानो सारी खुशियाँ एक साथ आज ही मिल जायेंगी। हम भारतीय भी पश्चिमी अंधानुकरण में इतने सराबोर हो जाते हैं कि उचित अनुचित का बोध त्याग अपनी सभी सांस्कृतिक मर्यादाओं को तिलांजलि दे बैठते हैं। पता ही नहीं लगता कि कौन अपना है और कौन पराया।

जनवरी से प्रारम्भ होने वाली काल गणना को हम ईस्वी सन् के नाम से जानते हैं जिसका सम्बन्ध ईसाई जगत् व ईसा मसीह से है। इसे रोम के सम्राट् जूलियस सीजर द्वारा ईसा के जन्म के तीन वर्ष बाद प्रचलन में लाया गया। भारत में ईस्वी सम्वत् का प्रचलन अंग्रेजी शासकों ने 1752 में किया। अधिकांश राष्ट्रों के ईसाई होने और अंग्रेजों के विश्वव्यापी प्रभुत्व के कारण ही इसे विश्व के अनेक देशों ने अपनाया। 1752 से पहले ईस्वी सन् 25 मार्च से प्रारम्भ होता था किन्तु 18वीं सदी से इसकी शुरुआत एक जनवरी से होने लगी। ईस्वी कलेण्डर के महीनों के नामों में प्रथम छः माह यानि जनवरी से जून रोमन देवताओं (जोनस, मार्स व मया इत्यादि) के नाम पर है। जुलाई और अगस्त रोम के सम्राट् जूलियस सीजर तथा उनके पौत्र आगस्टस के नाम पर तथा सितम्बर से दिसम्बर तक रोमन संवत् के मासों के आधार पर रखे गये। जुलाई और अगस्त, क्योंकि सम्राटों के नाम पर थे इसलिए दोनों ही इकत्तीस दिनों के माने गये अन्यथा कोई भी दो मास 31 दिनों या लगातार बराबर दिनों की संख्या वाले नहीं हैं।

ईसा से 753 वर्ष पहले रोम नगर की स्थापना के समय रोमन संवत् प्रारम्भ हुआ जिसके मात्र दस माह व 304 दिन होते थे। इसके 53 साल बाद वहाँ के सम्राट् नूमा पाम्पीसियस ने जनवरी और फरवरी दो माह और जोड़कर इसे 355 दिनों का बना दिया। सन् 1582 ई. में पोप ग्रेगरी ने आदेश जारी किया कि इस मास के 04 अक्टूबर को इस वर्ष का 14 अक्टूबर समझा जाये। आखिर क्या आधार है इस काल गणना का?

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नवम्बर 1952

में वैज्ञानिक और औद्योगिक परिषद् के द्वारा पंचांग सुधार समिति की स्थापना की गयी। समिति ने 1955 में सौंपी अपनी रिपोर्ट में विक्रमी संवत् को भी स्वीकार करने की सिफारिश की थी। किन्तु तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के आग्रह पर येगेरियन कलेण्डर को ही सरकारी कामकाज हेतु उपयुक्त मानकर 22 मार्च 1957 को इसे राष्ट्रीय कलेण्डर के रूप में स्वीकार कर लिया गया।

ग्रेगेरियन कलेण्डर की काल गणना मात्र दो हजार वर्षों के अति अल्प समय को दर्शाती है। जबकि यूनान की काल गणना 3579 वर्ष, रोम की 2756 वर्ष, यहूदी 5767 वर्ष, मिस्त्र की 28670 वर्ष, पारसी 198874 वर्ष तथा चीन की 96002304 वर्ष पुरानी है। इन सबसे अलग यदि भारतीय काल गणना की बात करें तो हमारे ज्योतिष के अनुसार पृथ्वी की आयु एक अरब 97 करोड़ 39 लाख 49 हजार 1011 वर्ष है। जिसके व्यापक प्रमाण हमारे पास उपलब्ध हैं। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में एक-एक पल की गणना की गयी है।

जिस प्रकार ईस्वी सम्वत् का सम्बन्ध ईसा जगत् से है उसी प्रकार हिजरी सम्वत् का सम्बन्ध मुस्लिम जगत् और इजरत मुहम्मद साहब से है। किन्तु विक्रमी सम्वत् का सम्बन्ध किसी भी धर्म से न हो कर सारे विश्व की प्रकृति, खगोल सिद्धान्त व ब्रह्माण्ड के ग्रहों व नक्षत्रों से हैं। इसलिए भारतीय काल गणना पंथ निरपेक्ष होने के साथ सृष्टि की रचना व राष्ट्र की गौरवशाली परम्पराओं को दर्शाती है। इतना ही नहीं, ब्रह्माण्ड के सबसे पुरातन ग्रन्थ वेदों में भी इसका वर्णन है। नव सम्वत् यानि संवत्सरों का वर्णन यजुर्वेद के 27वें व 30वें अध्याय के मंत्र क्रमांक क्रमशः 45 व 15 में विस्तार से दिया गया है। विश्व में सौर मण्डल के ग्रहों व नक्षत्रों की चाल व निरन्तर बदलती उनकी स्थिति पर ही हमारे दिन, महीने, साल और उनके सूक्ष्मतम भाग आधारित होते हैं।

इसी वैज्ञानिक आधार के कारण ही पाश्चात्य देशों के अंधानुकरण के बावजूद, चाहे बच्चे के गर्भाधान की बात हो, जन्म की बात हो, नामकरण की बात हो, गृह प्रवेश या व्यापार प्रारम्भ करने की बात हो, सभी में हम एक कुशल पंडित के पास जाकर शुभ लग्न व मुहूर्त पूछते हैं। और तो और देश के बड़े से बड़े राजनेता भी सत्तासीन होने के लिए सबसे पहले एक अच्छे मुहूर्त का इंतजार करते हैं जो कि विशुद्ध रूप से विक्रमी संवत् के पंचांग पर आधारित होता है। भारतीय मान्यतानुसार कोई भी काम यदि शुभ मुहूर्त में प्रारम्भ किया जाये तो उसकी सफलता में चार चांद लग जाते हैं। वैसे भी भारतीय संस्कृति श्रेष्ठता की उपासक है। जो प्रसंग समाज में हर्ष व उल्लास जगाते हुए एक सही दिशा प्रदान करते हैं उन सभी को हम उत्सव के रूप में मनाते हैं। राष्ट्र के स्वाभिमान व देश प्रेम को जगाने वाले अनेक प्रसंग चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिष्ठा से जुड़े हुए हैं। यह वह दिन है जिस दिन से भारतीय नव

वर्ष प्रारम्भ होता है। आइये, इस दिन की महानता के प्रसंगों को देखते हैंः–

ऐतिहासिक महत्व

1. यह दिन **सृष्टि रचना का पहला दिन** है। इस दिन से एक अरब 97 करोड़ 39 लाख 49 हजार 1011 वर्ष पूर्व इसी दिन के सूर्योदय से ब्रह्मा जी ने जगत् की रचना प्रारम्भ की।

2. **विक्रमी संवत् का पहला दिन** उसी राजा के नाम पर संवत् प्रारम्भ होता था जिसके राज्य में न कोई चोर हो, न अपराधी हो और न ही कोई भिखारी हो। साथ ही राजा चक्रवर्ती सम्राट् भी हो। सम्राट् विक्रमादित्य ने 2067 वर्ष पहले इसी दिन राज्य स्थापित किया था।

3. प्रभु **श्री राम का राज्याभिषेक दिवस** प्रभु राम ने भी इसी दिन को लंका विजय के बाद अयोध्या में राज्याभिषेक के लिये चुना।

4. **नवरात्र स्थापना** शक्ति और भक्ति के नौ दिन अर्थात् नवरात्र स्थापना का पहला दिन यही है। प्रभु राम के जन्मदिन रामनवमी से पूर्व नौ दिन उत्सव मनाने का प्रथम दिन।

5. **गुरु अंगददेव प्रगटोत्सव** सिख परम्परा के द्वितीय गुरु का जन्म दिवस।

6. **आर्य समाज स्थापना दिवस** समाज को श्रेष्ठ (आर्य) मार्ग पर ले जाने हेतु स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इसी दिन को आर्य समाज स्थापना दिवस के रूप में चुना।

7. **संत झूलेलाल जन्म दिवस** सिंध प्रान्त के प्रसिद्ध समाज रक्षक वरुणावतार संत झूलेलाल इसी दिन प्रगट हुए।

8. **शालिवाहन संवत्सर** का प्रारम्भ दिवसः विक्रमादित्य की भाँति शालिवाहन ने हूणों को परास्त कर दक्षिण भारत में श्रेष्ठतम राज्य स्थापित करने हेतु यही दिन चुना।

9. **युगाब्द संवत्सर** का प्रथम दिन 5112 वर्ष पूर्व युधिष्ठिर का राज्याभिषेक भी इसी दिन हुआ।

10. डा0 केशव राव बलीराम **हैडगेबार जन्म दिवस** राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के संस्थापक थे।

प्राकृतिक महत्व

1. वसंत ऋतु का आरम्भ वर्ष प्रतिपदा से ही होता है जो उल्लास उमंग, खुशी तथा चारों तरफ पुष्पों की सुगंधि से भरी होती है।

2. फसल पकने का प्रारम्भ यानि किसान की मेहनत का फल मिलने का भी यही समय होता है।

3. नक्षत्र शुभ स्थिति में होते हैं अर्थात् किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने के लिये यह शुभ मुहूर्त होता है।

क्या एक जनवरी के साथ ऐसा एक भी प्रसंग जुड़ा है जिससे राष्ट्र प्रेम जाग सके, स्वाभिमान जाग सके या श्रेष्ठ होने का भाव जाग सके। आइये! विदेशी को फेंक स्वदेशी अपनाएँ और गर्व के साथ भारतीय नव वर्ष यानि विक्रमी संवत् को ही मनायें तथा इसका अधिक से अधिक प्रचार करें।

●

वेदों की ओर लौटो

अमेरिकी संदर्भ : घाटे का बजट विकास का द्योतक या भयंकर मंदी और कर्जदारी का?

– रवीन्द्र पोतदार

किसी ईमानदार नवीन अर्थशास्त्री से पता करें कि वे अपने घर का बजट घाटे का बनाते हैं या लाभ का? कोई व्यवसायी अगर आय से अधिक खर्च की योजना बनाता भी है तो उसे कार्यान्वित करते समय वित्तीय स्थिति पुख्ता नहीं होने की दशा में उसका कार्यान्वयन अगले वित्तीय वर्ष के लिये टाल दिया जाता है। एक अच्छी आय वाला अधिकारी या गरीब व्यक्ति भी अपनी चादर जितनी ही पांव फैलाता है, उससे अधिक नहीं।

अपने गुलाम देशों को गुलाम बनाये रखने के लिये उनमें घाटे का बजट ब्रिटेन सरकार द्वारा बनवाया जाता था जिसका लाभ हमेशा अंग्रेजों को मिलता था। परन्तु आज तो वह कहावत सिद्ध होती है कि जो दूसरों के लिये गड्ढा खोदता है वह स्वयं उसमें गिर जाता है। अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस आदि विकासशील देश घाटे का बजट बनाते-बनाते आज इसी क्रम से भयंकर मंदी और कर्जदारी में डुबकी खा रहे हैं। इनके नागरिक तो राष्ट्रवादी, सिद्धान्तप्रिय, न्याय और ईमानदारी में अग्रगण्य कहलाते हैं फिर क्यों इन देशों के दर्जनों बैंक कर्ज के बोझ से डूब कर दिवालिया हो गये?

विकासशीलता की ये परिभाषा तो नहीं हो सकती कि विकासशील देश सबसे अधिक कर्ज में डूबा होवे, अपने निर्णयों को जो मात्र स्वार्थ से भरे हों उन्हें येन केन प्रकारेण दूसरे राष्ट्रों पर थोपे, शान्ति के नाम पर तख्ता पलटना और क्रूरता पूर्वक युद्ध करना, दबाव के लिये असैनिक ठिकानों पर भी हमला करना तथा इन सब के बाद हमले में हुए सम्पूर्ण खर्च या उससे कई गुना अन्य मद के द्वारा वसूल करना ताकि अपनी अर्थ व्यवस्था चलती रहे? बावजूद इसके अगर ऐसे देशों की अर्थव्यवस्था भयंकर रूप से चरमरा जावे तब उस विकसित अर्थव्यवस्था का क्या किया जावे? क्या विकासशील देश इसे अपनावें या इससे सबक लें?

द्वितीय विश्वयुद्ध में अमेरिका प्रमुख विजेता बनकर उभरा। उसने जीत के बाद दहशत के साथ-साथ एटामिक कार्यक्रमों पर एकाधिकार प्राप्त करने के लिये जापान के हिरोसिमा-नागासाकी शहरों पर एटामिक हमला किया जिसमें लगभग ढाई लाख शहरवासी की मौत के साथ कई लाख लोग जीवन भर के लिये उसके असर से जिंदा लाश के समान हो गये। ऐसे हमले और मुगलों द्वारा भारत में किये गये बर्बर हमलों में क्या अन्तर है? तैमूरलंग एवं चंगेज खाँ द्वारा पहले दिल्ली को लूटा गया फिर आम नागरिकों बच्चों एवं स्त्रियों को कत्ल किया गया और फिर दिल्ली में आग लगा दी गई। क्या इन दोनों घटनाओं में साम्यता नहीं है? हाँ यह जरूर विशेषता है कि इन हमलावरों के वंशज बाबर आदि ने कभी उनके द्वारा किये गये इन नृशंस कार्यों की जवाबदारी मानते हुए

उनकी भर्त्सना नहीं की। परन्तु अमेरिका में ऐसी परंपरा है कि बाद में जापान, विएतनाम, इराक आदि में की गई कार्यवाही को अनुचित निर्णय मानते हुए तत्तत् राष्ट्राध्यक्ष की भर्त्सना जरूर की! परन्तु मानव अधिकारों, विश्वशान्ति पुरस्कारों एवं आतंकवाद के खात्मे के लिये कटिबद्ध ये देश बताएं कि क्या इतने बड़े गुनाह का यही पश्चात्ताप है, ऐसा तो ओसामा ने भी 9/11 के हमले के बाद उसकी भर्त्सना कर दी थी? क्या जापान के ही लाखों नागरिकों को निरपराध होने एवं नृशंस अमानवीय तथा युद्ध नियमों के उल्लंघन करने के लिये उचित मुआवजा अमेरिका को नहीं देना चाहिये? सही कहा है कि जब रक्षक ही भक्षक हो तब सुरक्षित कौन रह सकता है।

विश्व युद्ध जीतने वाले देशों ने इनके द्वारा स्थापित विश्व साम्राज्य को चिरस्थायी स्वरूप देने के लिये एक नायाब तरीका निकाला और यू.एन.ओ. की नींव के ये 5 देश आधार स्तम्भ बने। अब इनके पास इस संस्था में लिये गये किसी अवांछित प्रस्ताव को टालने के लिये वीटो पावर है, तथा इनकी बनाई प्रजातन्त्र की परिभाषा से हटकर कोई राष्ट्राध्यक्ष या देश व्यवहार करता है तब ये वहाँ युद्ध के द्वारा शान्ति स्थापित करने का नाटक करने तथा युद्ध में हुए खर्च की वसूली के बहाने वहाँ के उत्पाद आदि मनमाने भाव से ले जाते हैं। वर्तमान में इसके पीछे मुख्य उद्देश्य है काले सोने अर्थात् पेट्रोलियम की लूट! अमेरिका ने तो विश्वशान्ति के बहाने से पी.ओ.के. समेत कई देशों में अपने सैनिक अड्डे सम्पूर्ण विश्व में फैला रखे हैं।

प्रकरणानुसार यहाँ इतना स्पष्ट करना आवश्यक है कि सच्ची शान्ति के लिये धर्मयुद्ध की शिक्षा तो "**युद्धस्व तु कौन्तेय.....**" द्वारा गीता में भी दी गई है परन्तु इसके लिये युद्ध को धर्मयुद्ध तथा शान्ति, न्याय, प्रजातन्त्र, सद्भावना, राजनीति आदि शब्दों को वैदिक परिप्रेक्ष्य ही में समझना होगा। अन्यथा सब कुछ वैसा ही होगा जैसा आज विश्व में व्याप्त है और एक शब्द में इसे "मंदी" द्वारा अच्छी तरह व्यक्त किया जा सकता है यद्यपि यह आधुनिक शब्द है और इसके मायने भी वही हैं जो आज विश्व व्याप्त है।

चाणक्य की अर्थनीति को भारतीय व्यवस्था में राम की राजनीति के बाद दूसरा दर्जा प्राप्त है तथा इसके आधार से पश्चिम देशों में काफी समय तक आर्थिक समृद्धि एवं राजनैतिक स्थिरता रही। (यहाँ यह स्वयं सिद्ध है कि चाणक्य द्वारा स्थापित मगध साम्राज्य से सिकंदर की सेना के पांव उखड़ जाना व गंगा पार किये बिना लौट जाना, तथा सेल्युकस की करारी हार एवं अपनी पुत्री एलन का विवाह चंद्रगुप्त से करना, यह दर्शाता है कि ये युरोपियन चाणक्य नीति को समझौते के तहत अवश्य लेकर गये थे। इसका प्रमाण यह भी है कि भारत पर पश्चिम का आक्रमण इस युद्ध के लगभग 1500 वर्षों बाद ही हुआ, छुटपुट घटनाओं को छोड़कर)। मदान्ध होकर जब ये देश उस अर्थनीति से भ्रष्ट हुए तब "**अनालोक्य व्ययं कर्त्ता ..... शीघ्रं विनश्यति**" (चाणक्य नीति 12/17 स्व. जगदीश्वरानन्द) अर्थात् बिना देखे, बिना विचारे, अनापशनाप खर्च करने वाला (घाटे का बजट बनाने वाला) शीघ्र ही नष्ट हो जाता है अर्थात् भयंकर मंदी की चपेट में आ जाता है, वाली

उक्ति इन पर चरितार्थ हो रही है।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि इनके इस कृत्य की मार विश्व के गरीब देशों के मजदूर एवं कृषकों पर ही पड़ती है जिससे इनका विकास होता है। अर्थात् अंतरिक्ष अभियान, ध्रुवों, समुद्रों एवं सम्पूर्ण पृथिवी के जंगलों आदि में 'डिस्कवरी' की तर्ज पर खोजें, गगन चुम्बी इमारतें आदि निर्माण तथा आकाश व चन्द्रमा आदि ग्रहों में निवास, विशेष रूप से परमाणु एवं केमीकल युद्ध आदि आदि जिस कारण से आज सम्पूर्ण विश्व प्रदूषित हो चुका है।

अमेरिका इंग्लैण्ड समेत सभी विकसित देशों में कमोवेश यही सोच कार्य कर रही है। विश्व बैंक समेत अन्य देशों का सबसे बड़ा कर्ज इन देशों पर है जिसके भुगतान की सम्भावना नहीं है अथवा किस मद से ये चुकायेंगे यहाँ यह बताने की आवश्यकता नहीं है। इस दुनिया पर सदियों तक राज्य करने वाला देश आज अपने यहाँ के युवकों को रोजगार नहीं दे पाता है तथा इनसे जुड़े यूरोप समेत विश्व के 80 देश आज गृहयुद्ध के कगार पर हैं इन पर भ्रष्टाचार के आरोप आकंठ डूबे रहने का है। लगभग 200 की संख्या में इनकी बैंकों का दिवाला निकल चुका है।

इन देशों के ग्रह और उपग्रहीय कार्यक्रम तथा आणविक विकासशीलता किस कीमत पर की जाती रही है उसे समझने में अब समय लगने वाला नहीं है इत्यादि अनेक तरह के विचार, इनकी राष्ट्रीय सोच, मानवीय परिप्रेक्ष्य में तथा सरकारी तंत्र समेत सदाचारी एवं राष्ट्रभक्त कही जाने वाली इनकी प्रजा का दिवाला निकलने में अब अधिक समय नहीं है। अर्थात् अनेक व्यवहार और कार्य, विशेषकर विकसित देशों के ऐसे हैं कि उन्हें उनके आधारभूत अर्थों में देखें तो तात्पर्य यह निकलता है कि इनके सोच कुछ, वक्तृता कुछ तथा कार्य तो सर्वथा भिन्न ही है। अधिक विस्तार न दें तो हम कह सकते हैं कि इसका वास्तविक कारण असत्य-अर्थ-प्रकाश तथा इनका प्रमाद ही है। प्रमाद इसलिये कि आज से 135 वर्षों पूर्व विश्व को दयानन्द ने अभूत पूर्व देन सत्यार्थ प्रकाश के रूप में दी थी उसे पढ़ा क्यों नहीं? और पढ़ा था तो आचरण कर उसकी जांच क्यों नहीं की? आज के विश्व में इससे बड़ा आश्चर्य क्या हो सकता है कि जिस सत्य के स्वाभिमान से संसार के सभी राष्ट्र आज स्वतन्त्र हैं वे उस सत्य का तात्पर्य नहीं जानते? वे जिस कारण से आज अभय और निर्भय हैं उस अहिंसा को वे मनमाने ढंग से या कहिये अनर्थों में स्वीकार करते हैं? इससे बड़ी व्यथा क्या होगी कि कई विकसित या विकासशील देश के राष्ट्राध्यक्ष स्वीकार करते हैं कि वे अब तक ''अहिंसा'' को नहीं समझ सके?

इन सबसे बढ़कर महान् आश्चर्य तो यह है कि आज विश्व की 90 प्रतिशत जनता जो कि भ्रष्टाचार से अत्यंत त्रस्त होकर मजबूरी में इसके विरुद्ध सशक्त अहिंसक आन्दोलन (प्रचलित परिभाषा से) कर रही है, जबकि वे और उनके नेता भ्रष्टाचार के वास्तविक स्वरूप को जानते ही नहीं हैं? उन सभी को यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि लाटरी और शेयर बाजार का आधार जुआ है तथा **विकसित देश के लाखों डालर के कर्ज में डूबे नागरिक से हजार डालर**

के कर्ज वाला अविकसित देश का नागरिक कहीं श्रेष्ठ है। वास्तव में विडम्बना यह है कि उपरोक्त शब्दों के अर्थों में तप और त्याग का स्वरूप आत्मा के समान सन्निहित है, जिसके अभाव में न तो इनको समझा जा सकता है न ही इन पर चला जा सकता है। **तप और त्याग के बिना न तो धर्म अर्थात् कर्त्तव्य पालन किया जा सकता है न सत्य-अहिंसा और भ्रष्टाचार हीन आचरण याने सदाचार का पालन किया जा सकता है जबकि ये सब मानवता के विशेष गुण हैं।**

लेख को अधिक विस्तार न देकर हम यहाँ यह स्थापित मानकर चलते हैं कि मनुष्य बिना गुरु के ज्ञान व विद्या नहीं सीख सकता और न ही उसे बना सकता है, अतएव आदि काल में उसे विद्या का ज्ञान परमेश्वर से वेदों के रूप में प्राप्त हुआ जो कि सत्य-अहिंसा-सदाचार आदि विद्याओं के आदि स्रोत हैं एवं ये वहीं से परिभाषित हुए हैं। इनमें वैदिक साहित्य की साक्षी भी है कि ब्रह्मा से लेकर दयानन्द तक के जितने भी ऋषि-मुनि 1 अरब 97 करोड़ वर्षों में हुए हैं उन सभी ने इनको एक जैसा परिभाषित किया, उनकी वे ही व्याख्या सत्य हैं– मान्य हैं इसके विपरीत नहीं। अतः आइये संक्षेप में इनके वास्तविक अर्थों को जानें :–

सत्य– मन वचन कर्म से अर्थात् जो पदार्थ जैसा हो उसको वैसा ही समझना वैसा ही बोलना और वैसा ही करना भी। जो-जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है वह सब असत्य। सत्यभाषण और आचरण से उत्तम धर्म का लक्षण कोई भी नहीं है, क्योंकि सत्पुरुषों में भी सत्य ही सत्पुरुषपन है। अपने आत्मा की पवित्रता विद्या के अनुकूल अर्थात् जैसा अपने को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है वैसे ही सर्वत्र समझ लेना कि मैं भी किसी को दुःख व सुख दूंगा तो वह भी अप्रसन्न और प्रसन्न होगा। इत्यादि।

अहिंसा– तत्राहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः– अर्थात् सब प्रकार से सब काल में सब प्राणियों के साथ वैर छोड़ के प्रेम प्रीति से वर्त्तना ही अहिंसा है इससे अन्यथा करना हिंसा है। जैसे पक्षपात रहित होकर न्यायाधीश चोर-डाकू इत्यादि हिंसक लोगों को मृत्युदंड आदि की सजा तथा साहूकार आदि ईमानदार-सत्यवादी स्वभाव वालों को आरोप से मुक्त करके स्वयं सत्यवादी न्यायकारी दयावान् और अहिंसक संज्ञा को प्राप्त होते हैं वैसे ही प्रत्येक मनुष्य का नेता पदाधिकारियों को अहिंसा के माध्यम से पक्षपात छोड़कर न्याय और दया पूर्वक समाज में कार्य करना उचित है। ऐसे व्यवहार के द्वारा व्यक्ति संसार के उपकार तथा अपनी शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति के लिये प्रशस्त होवे।

भ्रष्टाचार एवं अनाचार– ये पक्षपात किए बिना नहीं होता, तथा इसका व्यवहार ऐसा है जैसे तमाखू सेवन से कैंसर होता ही है। इसको समझने के पहले हम एक सार्वभौमिक सत्य पर दृष्टि डालें कि- कोई गुनहगार व्यक्ति नेता व उसके समूह के विरुद्ध सत्य को उजागर करने के लिये सत्य निष्ठा पूर्वक गवाही देता है तो वे हत्यारे दोषी समूह यह कहकर अपने आरोपों से पीछा नहीं छुड़ा सकते हैं कि इस गवाह का दामन पाक साफ नहीं है। अर्थात् अपने अपने

गुनाहों के अनुरूप दोनों अपनी अपनी सत्य साक्षी से यथायोग्य सजा के पात्र हैं।

आधारभूत सिद्धान्तों के आधार पर भ्रष्टाचार का तात्पर्य पथभ्रष्ट होना है, कर्त्तव्यों का त्यागकर अकर्त्तव्यों का करना है, पक्षपात रहित न होकर पक्षपात के द्वारा अत्यंत स्वार्थ साधना है, मानवीय गुणों का त्याग कर दानवीय प्रवृत्ति को प्रश्रय देना है। यह सत्य है कि पक्षपात रहित होना धार्मिकता है तथा पक्षपात करना अधर्म है। हाँ कुछ सुधार के साथ यह कहा जा सकता है कि कर्त्तव्याकर्त्तव्य के पशोपेश में वह कार्य अवश्य करणीय है जिससे समाज या राष्ट्र के अधिक से अधिक लोगों का लाभ होवे।

यहाँ यह तथ्य उजागर होता है कि इस समय **विश्व में राष्ट्रों की लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि या वनउपज से जुड़ कर जंगल या ग्रामीण अंचल में रहती है तथा विशुद्ध लाभ का उत्पाद वहीं से होता है। सभी तरह के पर्यावरण को वे पोषित करते हैं। अपने रहन-सहन, खान-पान आदि में नगण्य खर्च करके भी आज विश्व के बजट में उनका सर्वाधिक योगदान है।** इसके विपरीत शहरों के आधुनिकीकरण सभी तरह के तेज वाहन, उनके लिये सड़कें आदि इन्फ्रास्ट्रक्चर्स, बड़े बांध, गगनचुम्बी इमारतें, डिस्कवरी की तर्ज पर की जा रही खोजें, अंतरिक्ष कार्यक्रम एफ-1, कार रेसादि, बृहत् उद्योग, मशीनीकरण की अंधाधुंध अनिवार्यता, पेट्रोलियम पदार्थों का अनावश्यक दोहन, शहरों एवं उद्योगों के द्वारा छोड़े गये पानी एवं हवा का गलत प्रबंधन, जंगलों का अंधाधुंध कटाव एवं पहाड़ों का समतलीकरण आदि द्वारा जो लाभ तथा विकास दर्शाया जाता है वह एक तो भुलावा मात्र है दूसरा उससे फायदा मात्र 1 या 2 प्रतिशत जनसंख्या को होता है। इसमें अगर कृत्रिम या मानवीय त्रुटि से किये जाने वाले लम्बे-लम्बे युद्ध तथा लोगों को भयभीत कर फिर सुरक्षा के लिये किया जाने वाला आक्रमण आदि जोड़े जाने पर घाटे के बजट की व्यवस्था किये जाने का कारण स्पष्ट हो जाता है जिसे भ्रष्टाचार की श्रेणी में रखा जा सकता है।

इसी से यह वार्त्ता भी स्पष्ट हो जाती है कि विश्व में अन्ना हजारे जैसे दर्जनों व्यक्ति अगर भ्रष्टाचार को उजागर करने आते हैं तो उन पर व समर्थकों पर मुसीबतों के पहाड़ क्यों टूट पड़ रहे हैं?

अंत में आधार भूत वैदिक मान्यतास्वरूप हम यहाँ यह लोभ संवरण नहीं कर पाते हैं कि भ्रष्टाचार का वैदिक तात्पर्य वेद निर्दिष्ट आचारों का उल्लंघन मात्र है। वेद की संस्कृत पूर्णतया वैज्ञानिक तथा परमात्मा की भाषा है। वेद मानवमात्र के कल्याण की कामना के लिये बने हैं तथा पूर्णतया पक्षपात रहित हैं, अतएव मानवीय संविधान होकर सत्य विद्या, अहिंसा एवं सदाचार के आदि स्रोत हैं। आशा है सुधीजन वैदिक विद्वानों के साथ मिलकर विश्व से भ्रष्टाचार मिटा कर शान्ति स्थापित करेंगे।

●

पारमार्थिक औषधालय
1/1, विश्वविद्यालय मार्ग, उज्जैन
(म.प्र.)-456010

ईश्वर कहाँ है?

– प्रकाश आर्य, महू (म.प्र.)

आज ईश्वर-दर्शन का अभिलाषी व्यक्ति जगह-जगह निरन्तर भ्रमण करते हुए उसे पाने का प्रयास करने में लगा हुआ है। उसे ढूँढ़ने से पहले यह भूल हो रही है कि जिसे हम ढूँढ़ रहे हैं उसके विषय में यह पता नहीं किया कि वह है कहाँ?

आज सारा संसार उसे पाने के लिए परेशान है, उसे ढूँढ़ रहा है, परन्तु वह कहाँ मिलेगा? किस दिशा में? और कैसे उसको पाया जा सकता है? इस पर कोई निश्चितता नहीं है। हमने उसके कुछ निश्चित स्थान मान रखे हैं, कोई उसे नदी, कोई तीर्थ, कोई मन्दिर या देवालयों में, कोई पहाड़ों पर बने स्थानों पर, कोई समुद्र या नदी के किनारों पर उसका रहना मानकर वहाँ जाकर ढूँढ़ रहा है।

इन स्थानों की प्राकृतिक सुन्दरता से मन को सुख-शान्ति-प्रसन्नता होती है, थकान भी इन सुन्दर दृश्यों से मिट जाती है, यात्रा भी यादगार बन जाती है, किन्तु ईश्वर-दर्शन के लिए ऐसी सब जगह जाने पर भी ईश्वर का साक्षात्कार नहीं हो पाता। ईश्वर नहीं, उसकी प्राकृतिक रचना मन को प्रसन्नता से भर देती है। स्वर्ग-सी अनुभूति होती है। वास्तव में यही अनुभूति तो उसकी अनुभूति है। ये अद्‌भुत दृश्य उसकी कृपा का ही स्मरण कराते हैं।

ईश्वर को पाने हेतु जब वह हरिद्वार में जाता है, तो हरिद्वार में रहने वाला ईश्वर को ढूँढ़ने बनारस जाते हुए मिलता है। जब बनारस पहुँचे तो वहाँ रहने वाला तिरुपति ईश्वर की खोज में जाते हुए मिलेगा। जब तिरुपति गए तो वहाँ का व्यक्ति उसे ढूँढ़ने जगन्नाथपुरी जाता हुआ मिलेगा। यह कैसी बात है कि हम जहाँ उसे ढूँढ़ने जा रहे हैं वहाँ का व्यक्ति उसे ढूँढ़ने कहीं और जाता हुआ मिलता है। ईश्वर के सम्बन्ध में हमें यह विश्वास दिलाया गया कि वह वहाँ है और इसी विश्वास के कारण ही हम वहाँ जाते हैं। यदि यह विश्वास सही हो तो वहाँ का रहने वाला व्यक्ति दूसरी जगह क्यों जाता है? सारा संसार ऐसे ही प्रयास में लगा हुआ है, घूम रहा है, परेशान हो रहा है, जो जहाँ बता दे वहीं पहुँच रहा है, परन्तु ईश्वर का उसको सानिध्य प्राप्त नहीं हो पा रहा है। अन्त में वह सब कुछ लुटाकर, हारकर रह जाता है और फिर अन्तिम समय तक अशान्त ही बना रहता है।

ईश्वर के लिए होने वाले इन मानवीय प्रयासों को देखकर प्रश्न उठता है क्या वास्तव में ईश्वर को पाना असम्भव है? बहुत कठिन है? इसका उत्तर है– ऐसा बिलकुल नहीं है। यह तो अज्ञानता के कारण समस्या बनी हुई है, क्योंकि हमने न तो ईश्वर के स्वरूप को समझा, न हमें उसकी संख्या का ज्ञान है, न उसके मिलने की जगह का ही हमें निश्चित पता है। इन सब

कारणों से हमारा दृढ़ विचार नहीं बन पाया और जब आस्था एक के स्थान पर अनेक स्थानों पर बंट जाती है तो एकाग्रता, लक्ष्य, प्रयास और आत्मविश्वास भी बँट जाता है, जो किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उचित नहीं है। वह सफलता में बाधक है और असफलता का कारण है। ईश्वर के बारे में हमारी कुछ ऐसी ही स्थिति है–

भ्रमित हो चौराहे पर, मंजिल ढूँढ रहे हैं।
जिसे पाना चाहते, उसी के नीचे खड़े हैं।।

कई बार ऐसा देखा गया कि वस्तु पास में रखी है फिर भी हम उसे ढूँढ़ रहे हैं। एक बार एक सज्जन बड़े परेशान होकर कुछ ढूँढ़ रहे थे ऑफिस के कर्मचारी ने पूछा– भाई, क्या ढूँढ रहे हो? तब वे बोले मुझे डाक्यूमेंट चेक कर टाईपिंग के लिए देना है और मेरा चश्मा नहीं मिल रहा है। उनके इस वाक्य को सुनकर अन्य कर्मचारी उनकी ओर देखकर जोर से हँसने लगे। तभी उन्हें ख्याल आया अरे! चश्मा तो उन्होंने सिर पर चढ़ा रखा है।

चश्मा तो पास ही था किन्तु फिर चश्मा ढूँढ़ने का क्या कारण था? क्योंकि उनको चश्मा पास होने का ज्ञान नहीं था।

हमारे जीवन में कई बार पढ़ने, सुनने का अवसर आता है कि परमात्मा घट-घटवासी है, हमने वाणी का परिश्रम करके बस घट-घटवासी बोल दिया पर उसके अर्थ को तो समझा ही नहीं। घट-घटवासी का तात्पर्य मन में, आत्मा में, इस पंचभूत से बने मानव चोले में है यह है। वह हमारे अन्दर ही हमारे हृदय में विद्यमान है और इस बात पर पूर्ण विश्वास है तो फिर उसे इधर-उधर क्यों ढूँढ़ेंगे? परन्तु यह सिर्फ वाणी तक सीमित है, मन व बुद्धि से दूर है। इसीलिये हम उसे बाहर ढूँढ़ रहे हैं, दूसरी जगह, यहाँ-वहाँ, जाने कहाँ-कहाँ! पृथ्वी पर, पाताल में, आकाश में, जहाँ मर्जी हो उसका स्थान मान लिया और वहीं ढूँढ़ने चल दिए।

उस परमात्मा को हम सर्वव्यापी कहते हैं। उससे ऐसा कोई स्थान बचा हुआ नहीं है जहाँ वह मौजूद न हो। सम्पूर्ण रचना उसकी कृति है। ये सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथ्वी, बड़े-बड़े समुद्र, अनन्त सृष्टि सब कुछ का वही एक मात्र स्वामी, अधिपति, संचालक, निर्माता है। सम्पूर्ण जगत् उससे आच्छादित है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है, विश्व की पहली संस्कृति, विश्व का पहला दर्शन, ज्ञानकोष व अध्यात्म वेद संहिता है। वेद परमात्मा की वाणी है। यजुर्वेद के 40वें अध्याय का प्रथम मन्त्र इसकी पुष्टि करता है।

ईशा वास्यामिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
– यजु. 40/1

यह समस्त जगत्, समस्त रचना, ईश्वर के अन्तर्गत है अर्थात् सभी ओर ईश्वर का साम्राज्य है, उसके अन्तर्गत ही सब कुछ है। वेद का एक और मन्त्र बहुत सार्थक विचार इस सम्बन्ध में देता है–

अन्ति सन्तं न जहात्यन्ति सन्तं न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।।
– अथर्व. 10/8/32

अर्थात्– परमात्मा हमारे इतना निकट है कि हम उसे देख नहीं पाते हैं, जो इतना निकट है, उसे छोड़ भी नहीं सकते। अतः परमेश्वर को यदि देखना है और उसे यदि छोड़ना नहीं चाहते तो परमेश्वर की काव्यमयी कृति वेद को देखो, जो कभी जीर्ण नहीं होता, न कभी मरता है। योगिराज श्री कृष्ण ने अर्जुन को ईश्वर के स्थान के सम्बन्ध में बताया–

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशे अर्जुन तिष्ठति।

– गीता 18/61

अर्थात्– हे अर्जुन! ईश्वर इस पंचभूत से बने शरीर के हृदय में निवास करता है। विश्व प्रसिद्ध सन्त तुलसीदास जी भी प्रभु की सर्वव्यापकता को बताते हुए कहते हैं–

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम ते होई प्रकट मैं जाना।।

पुनः आगे कहते हैं–

एक अनीह अरूप अनामा।
अज सच्चिदानन्द परधामा।
व्यापक विश्वरूप भगवाना।।

जो परमेश्वर एक है, जिनकी कोई इच्छा नहीं है, जिनका कोई रूप और नाम नहीं है, जो अजन्मा, सच्चिदानन्द और परमधाम है, और जो सबमें व्यापक और विश्वरूप है वह परमेश्वर प्रेम पूर्वक ध्यान समाधि से प्राप्त होता है। सन्त नानकदेवजी ईश्वर को सर्वव्यापक मानते हुए कहते हैं–

एको सिमरो नानका, जो जल-थल रहा समाय।
दूजा कोहि सिमिरिये, जो जन्मे ते मर जाए।।

अर्थात् उसका स्मरण करो जो जल-थल सभी स्थानों पर व्यापक है। जो जन्म लेता है और मर जाता है, उसे क्यों पूजते हो?

हम गम्भीरता से सोचें विद्वानों, सन्तों, धर्मग्रन्थों के विषय में हमारी एक बड़ी अजीब बात है, हम सन्तों धर्मग्रन्थों को तो मानते हैं, उनके चित्र भी लगाते हैं, जयन्ती भी मनाते हैं, उनकी जय-जयकार करते हैं, पूजा तक करते हैं, किन्तु हम उनके बताए मार्ग पर नहीं चलते। वास्तव में यह उनकी अवहेलना है, उनका निरादर है, दिखावा है। वस्तुतः हम परमात्मा जहाँ पाया जा सकता है, वहाँ नहीं ढूँढ़ते हैं। जैसे–

एक बूढ़ी माता थी वह गाँव के चौराहे पर जमीन पर कुछ ढूँढ़ रही थी। देखने वाले कुछ नवयुवक वहीं किसी ओटले पर बैठे थे। जब काफी समय हो गया और युवकों को लगा कि ये वृद्धा परेशान है कोई वस्तु ढूँढ़ रही है। तो वे युवक उस वृद्धा के पास आकर बोले माता जी! आप क्या ढूँढ़ रही हैं हमें बताइए आपकी मदद करेंगे।'' बुढ़िया बोली, बेटा मेरी सूई गिर गई है उसे ढूँढ़ रही हूँ। वृद्धा की बात सुनकर नवयुवक भी सूई ढूँढ़ने लगे। ढूँढ़ते हुए काफी देर के पश्चात् भी जब सूई नहीं मिली, तब उनमें से एक युवक ने पूछा माता यहाँ तो तेरी सूई मिल ही नहीं रही है, जरा याद करके बता कि आखिर वह सूई गिरी कहाँ थी? वृद्धा ने कहा बेटा सूई तो मेरी कोठरी में गिरी थी। नवयुवकों ने सिर पर हाथ लगाते हुए कहा– ''अरी अम्मा! तूने अपना

भी समय बिगाड़ा और हम सबका भी। जब सूई कोठरी में पड़ी थी तो यहाँ ढूँढ़ने का क्या मतलब था, क्यों व्यर्थ ही मेहनत की?''

परन्तु यह कहानी केवल उस बुढ़िया की नहीं है, ईश्वर के सम्बन्ध में आज हर मस्तिष्क की यही कहानी है। परमात्मा रहता कहीं है और उसे ढूँढ़ते कहीं हैं। ईश्वर की सर्वव्यापकता की यह बात संसार के महान् चिन्तक, विद्वान्, वेद-प्रचारक, जगत्गुरु स्वामी शंकराचार्य ने अपनी रचना ''परापूजा'' में लिखी–

सर्वाधारो निराधारः सर्वव्यापक ईश्वरः।
प्राणादि प्रेरकत्वेन जीवने हेतुरेव च॥

अर्थात्– परमात्मा सर्वाधार सबका आधार है, सभी जगह व्याप्त है, सर्वव्यापक है, प्राणों का प्रेरक है, जीवों का कारण है। क्या स्वामी शंकराचार्य की बुद्धि व ज्ञान पर भी हम कोई संशय रखते हैं?

सर ओलीवर लॉज अपने समय के सबसे बड़े वैज्ञानिक तथा Royal Socity तथा Association for the Advancement of Science के प्रधान थे। उन्होंने एक निबन्ध में लिखा–

"We are deaf and dumb to the infinite grandeur around us unless we have insight to appriciate the whole and so to recognise in the woven fabric of existence flowing steadly from the loom in an infinite progress towords perfection the evergrowing garment of a transcendent God."

(Is modern Intelligence out growing God' by V.T. sunderland Page 197)

अर्थात्– हम अपने चारों ओर जो असीम सौन्दर्य पाते हैं उसके विषय में हम बहरे और गूँगे रहते हैं। जब तक कि हमारे अन्दर समस्त जगत् के महत्त्व को समझने और उसके अन्दर ओत-प्रोत सर्वव्यापक परमेश्वर की सत्ता को स्वीकार करने की आन्तरिक दृष्टि व बुद्धि न हो।

हेनरी डूमण्ड नामक वैज्ञानिक ने लिखा है कि– "Evolution shows god is everywhere"= विकास सर्वत्र ईश्वर को दिखाता है।

अज्ञानतावश जिस परमात्मा का साम्राज्य समस्त ब्रह्माण्ड है, उसे हम कुछ निश्चित स्थानों में ही मानें, तो यह उसका अवमूल्यन है। जैसे किसी देश के राजा का साम्राज्य सम्पूर्ण देश में होता है किन्तु सम्पूर्ण देश न मानते हुए उसे कुछ ग्रामों या नगरों तक सीमित कर दिया जावे तो यह उसकी शक्ति को कम करना है, या उसके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी का हम में अभाव है। ठीक इसी प्रकार परमपिता परमेश्वर को जगदीश कहते हैं, जो जगत् का ईश है, उसे एक देशी मानना उसकी शक्ति, साम्राज्य व उसकी महानता को कम करना है।

दूरी तीन प्रकार की होती है, समय की, स्थान की, ज्ञान की। पाठकवृन्द! थोड़ा ध्यान देवें परमेश्वर नित्य है और आत्मा भी नित्य है, इसलिए

हमारे और उसके बीच में समय की दूरी नहीं हो सकती, वह सर्वव्यापक है कण-कण में बसा है, ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ वह नहीं रहता हो। इसलिए हमारे और उसके बीच स्थान की दूरी भी नहीं हो सकती। किन्तु फिर भी दूरी है तभी तो हम उसे ढूँढ़ रहे हैं। वास्तव में उसका ठीक-ठीक ज्ञान न होने से उसके और हमारे मध्य ज्ञान की दूरी है जो हमें पास रहते हुए भी एक दूसरे से दूर रख रही है। कृपया इस उदाहरण से समझने का प्रयास करें–

एक सेठ थे उनके पास बहुत कीमती हीरा था। उसे वह बेचना चाहते थे। अच्छी कीमत मिल सके इसलिए उसने सोचा यदि किसी बड़े शहर में जाकर इस हीरे को बेचूँगा तो ठीक कीमत आ जावेगी और वहाँ कोई निश्चित रूप से हीरा खरीद ही लेगा। इस विचार से वह एक बड़े शहर में चला गया। कई दुकानों पर जाकर बताया परन्तु हीरे के ठीक दाम नहीं मिल रहे थे। इस प्रयास में कई दिन बीत गए परन्तु हीरे का उचित दाम देने वाला कोई खरीददार नहीं मिला।

सेठ की इस स्थिति को एक ठग देख रहा था। उसके मन में विचार आया कि यदि मैं इस सेठ से किसी प्रकार यह हीरा प्राप्त कर लूँ तो जीवन ठीक-ठाक बीत जावे और गरीबी दूर हो जावे। इस विचार से ठग ने सेठजी से सम्पर्क कर कहा– सेठजी! मैं यहाँ कई बड़े व्यापारियों को जानता हूँ हीरा बिकवाने में मैं मदद करूँगा, आप मेरा सहयोग लीजिए बदले में मेरा मेहनताना दे देना। सेठजी ने ठग की बात मानी और उससे सहयोग लेने लगे। ठग दिनभर सेठजी के साथ रहता, कई दुकानों पर उन्हें ले जाता और रात्रि में भी वह सेठजी के साथ ही उसी कमरे में रुक जाता जहाँ सेठ सोते थे। यह क्रम काफी दिन चला परन्तु सेठजी को हीरे का उचित दाम नहीं मिल रहा था। अन्त में सेठजी ने अपने घर आने का निर्णय लिया और उस ठग को जो सेवक के रूप में सहयोग कर रहा था कुछ पैसा देना चाहा।

ठग तो सेठजी के जाने से उदास था क्योंकि हीरा तो वह ले नहीं पाया। उसको अपना भारी नुकसान लग रहा था। उसने सेठजी से कहा मुझे कोई पैसा नहीं चाहिए पर तुम मुझे एक बात बता दो कि रात में तुम हीरा कहाँ रखते थे? मैं रातभर उसे ढूँढ़ता रहा, रात-रात भर जागा पर हीरा कहीं नहीं मिला, इस बात का मुझे आश्चर्य हो रहा है।

सेठजी ने उसे बताया, अरे बावले! देख, रात्रि में तू और मैं जब सोने जाते थे उसके पहले मैं अपना कुर्ता निकालकर इस खूँटी पर टाँग देता था और तू अपनी कमीज उस पर टाँग देता था। जब तू कमीज टाँग देता उसके बाद मैं तुझसे पीने के लिए पानी माँगता या किसी काम से बाहर भेज देता था। सेठजी ने कहा, बस, जब तू पानी लेने जाता था उस समय मैं हीरा तेरी कमीज की जेब में डाल देता। तू रातभर कभी मेरा कुर्ता टटोलता, कभी बिस्तर, कभी पेटी पर कभी तूने अपनी जेब नहीं देखी। ठग मन ही मन अपने को कोसने लगा, हाय रे मेरी बदकिस्मती, सब जगह देखता रहा, पर अपनी ही जेब नहीं ढूँढ़ी

जिसमें हीरा था।

आज हमारी भी ठीक यही स्थिति है, ईश्वर के रहने का स्थान तो मन-मन्दिर है, परन्तु वहाँ तलाश किया नहीं और ढूँढ़ते फिरे सारे जमाने में वस्तुतः वह हर वक्त, हर जगह हमारे साथ है, उसे ढूँढ़ने कहीं और जाने की आवश्यकता ही नहीं है, जब चाहो तुम उससे मिल सकते हो, क्योंकि–

दिल के आईने में है, तस्वीरे यार की।
बस जरा गर्दन झुकाई, देख ली।।

सुधी पाठकवृन्द! परमात्मा की प्राप्ति और उसका सान्निध्य प्राप्त करने के लिए भटकाव को छोड़ सत्य मार्ग चुनना होगा। भौतिक आँखों से नहीं, ज्ञानचक्षु से देखना होगा। उसे भौतिक रूप में किसी व्यक्ति या वस्तु के समान दिखाई देने के भ्रम को छोड़ना होगा। उसे तो उसकी अनुभूति करके ही देखा जा सकता है।

वह अपरिवर्तनशील है अनुभूति का विषय है, इन चर्मचक्षुओं का विषय नहीं है। इस पर दृढ़ विश्वास करना होगा। ●

'ईश्वर से दूरी क्यों?' पुस्तक से साभार

दिल्ली में आयोजित 15वाँ विश्व संस्कृत सम्मेलन

5 जनवरी को दिल्ली में 15वें विश्व संस्कृत सम्मेल का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन भारत के प्रधानमंत्री माननीय **श्री मनमोहन सिंह जी** ने किया। आपने अपने उद्घाटन भाषण में संस्कृत भाषा के प्रति अपना अनुराग प्रकट करते हुए कहा– ''संस्कृत भाषा न केवल कुछ महत्त्वपूर्ण काव्यादिकों की भाषा है अपितु गणित, वनस्पति विज्ञान, चिकित्सा, कला और मानविकी के क्षेत्र में यह ज्ञान का खजाना है। संस्कृत भाषा में वर्त्तमान ज्ञान प्रणाली और भारतीय भाषाओं को समृद्ध बनाने की अद्भुत क्षमता है, यह किसी एक जाति, धर्म या सम्प्रदाय की भाषा नहीं है बल्कि यह ऐसी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है जो नस्ली सोच से ऊपर उठकर खुले, सहिष्णु एवं सभी को गले लगाने के व्यापक विचार का प्रतीक है, संस्कृत भाषा में खुलापन और संयम का अद्भुत संयोग है जिसे हमें अपने जीवन में उतारना चाहिये। सरकार संस्कृत के विकास और प्रोत्साहन के लिये प्रतिबद्ध है।''

यद्यपि यह सत्य है कि सरकार की ओर से संस्कृत के विकास और प्रोत्साहन के निमित्त आर्थिक सहयोग अवश्य प्राप्त होता है परन्तु संस्कृत भाषा का विकास इतने मात्र से सम्भव नहीं है। होना तो यह चाहिये कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन की अनिवार्यता हो ताकि भारत का बच्चा-बच्चा संस्कृत का अध्ययन करे पर यह अनिवार्यता तो दूर आज वैकल्पिक भाषा में भी इसका स्थान नहीं है। यह अत्यन्त खेदावह है इसके लिये शायद जन आन्दोलन की आवश्यकता है। (सम्पा0) ●

स्मृति शेष चौधरी मित्रसेन आर्य जी की पुण्यतिथि १७ दिसम्बर पर विशेष

– कैप्टन अभिमन्यु आर्य

जमीन से चलकर आसमान की ऊँचाईयाँ छूने की तमन्ना रखने वालों के लिए स्व. चौधरी मित्रसेन जी आर्य का जीवन एक गीता के समान है, जिसे वे अपने जीवन में उतार कर बड़े से बड़ा काम करने का संबल प्राप्त कर सकते हैं। सरल हृदयी, मृदु भाषी, पुरुषार्थी, समाज सेवी, सर्वजनहित आकांक्षी, पारंपरिक मूल्यों के संरक्षक-पोषक जैसे कई आयामों वाले विराट व्यक्तित्व के धनी चौधरी मित्रसेन आर्य जी के आदर्श और जीवन मूल्य सदैव आगे बढ़ने व मानवता की सेवा करने के लिए सभी को प्रेरित करते रहेंगे। चौधरी मित्रसेन एक सफल उद्योगपति, सहृदय, समाजसेवी, मन-वचन और कर्म से शुद्धतम आर्य समाजी और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः' में विश्वास करने वाले व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व की पहचान सबसे भिन्न थी।

चौधरी मित्रसेन जी का जन्म 15 दिसम्बर, 1931 को हिसार जिले के खांडाखेड़ी गाँव के आर्य समाजी परिवार में हुआ। उनके पिता चौधरी शीशराम जी खेती-बाड़ी के अलावा आर्य समाज के अवैतनिक भजनोपदेशक थे। स्वाधीनता संग्राम सेनानी परिवार में जन्मे चौधरी मित्रसेन आर्य जब छोटे थे, तब उनके घर में किसी तरह की कमी नहीं थी, लेकिन कुछ हादसे ऐसे हुए कि उन पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। कालामोतिया के चलते उनके पिता जी की आँखों की रोशनी चली गई और कुछ घटनाओं ने समय के चक्र को उल्टा घुमा दिया। इसी कारण चौधरी मित्रसेन जी को अपनी तीसरी कक्षा में ही पढ़ाई छोड़कर बाल्यावस्था में ही जीवन के कुरुक्षेत्र में उतरना पड़ा। वे बड़े मनोयोग से गो-पालन और कृषि का कार्य करते रहे। चौधरी साहब ने बचपन में ही व्यायाम, प्राणायाम, वैदिक संस्कारों को आत्मसात् कर लिया। चौधरी मित्रसेन जी ने अपने आशावादी दृष्टिकोण, विवेक व बुद्धि के बल पर पहाड़-सी कठिनाईयों का सामना अत्यंत धैर्यपूर्ण ढंग से किया। चौधरी मित्रसेन आर्य ने अपनी सूझबूझ, कठिन परिश्रम, दूरदर्शिता और सादगी के बल पर सफलता की एक ऐसी शानदार इबारत लिखी, जो करोड़ों लोगों का सपना होती है। स्व. चौधरी मित्रसेन जी आर्य वेद और महर्षि दयानन्द सरस्वती के सिद्धान्तों पर अटल विश्वास रखते थे। चौधरी मित्रसेन आर्य जी की जीवन यात्रा इस बात का सूचक है कि पुरुषार्थ, सद्भावना व सद्बुद्धि के सहारे व्यक्ति किस प्रकार शून्य से शिखर तक पहुँच सकता है। चौधरी मित्रसेन आर्य का मानना था कि आदर्श एवं चरित्रवान् युवाओं के

निर्माण से ही देश का सही मायने में विकास हो सकता है। इसी उद्देश्य से उन्होंने अनेक शिक्षण संस्थाएँ खोली। उन्होंने शिक्षा के विस्तार के लिए उड़ीसा के बीहड़ जंगलों से लेकर घने पहाड़ों तक गुरुकुल, विद्यालयों, महाविद्यालयों, बीएड कॉलेज, इंजीनियरिंग सहित कई आधुनिक शिक्षण संस्थाओं का निर्माण करवाया।

शिक्षा, उद्योग, मीडिया के क्षेत्रों में नया मुकाम बनाने वाले चौधरी मित्रसेन जी के जीवन पर क्रांतिकारी गतिविधियों का गहरा प्रभाव रहा। उन्होंने पारिवारिक दायित्वों के साथ-साथ सामाजिक सरोकारों को सदैव महत्व दिया। उनका कारोबार अभी शुरू ही हुआ था कि हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन शुरू हो गया। उन्होंने अपने नए स्थापित कारोबार की परवाह न करते हुए हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया और साढ़े चार माह हिसार जेल में बंद रहे। वे तब तक इस आन्दोलन से जुटे रहे जब तक कि यह आन्दोलन सफल नहीं हो गया।

सन् 1948 में चौधरी मित्रसेन जी जींद जिले के गाँव जुलानी के श्री अमृत सिंह की सुपुत्री **परमेश्वरी देवी** के साथ परिणय सूत्र में बंध गए। इसी वर्ष उन्होंने रोहतक में एक वर्कशॉप में लेथ मशीन का काम सीखना शुरू किया। वर्ष 1949 में सोनीपत में एटलस साइकिल की फैक्ट्री लगी। वहाँ भी उन्होंने दो माह कार्य किया। इसके बाद रोहतक में साइकिल के पुर्जे बनाने की फैक्ट्री में 6 महीने कार्य किया। वर्ष 1950 में उन्होंने रोहतक के बिजली घर में काम शुरू कर दिया। उन्होंने लगभग साढ़े तीन वर्ष तक वहाँ कार्य किया। सन् 1954 के शुरू में चौधरी मित्रसेन जी उदयपुर चले गए। उन्होंने लगभग सवा वर्ष तक उदयपुर की वर्कशॉप में कार्य किया। वे वहाँ से हिसार आए लेकिन कुछ ही समय बाद जब उन्हें पता चला कि उन्हें यहाँ किसी दूसरे की नौकरी छीनने के लिए रखा गया है, तो परोपकारी चौधरी मित्रसेन जी आर्य ने अपनी श्रेष्ठता साबित कर यह नौकरी छोड़ दी और अपना कारोबार आरम्भ कर दिया। वर्ष 1956 में उन्होंने रोहतक में अपनी वर्कशॉप लगाई।

रोहतक के बाद चौधरी मित्रसेन आर्य ने उड़ीसा के क्योझर जिले बड़बिल की तरफ रुख किया। वहाँ शुरुआती परेशानियों के बाद भी उन्होंने अपने पैर जमा लिए। हालाँकि उन्हें हिस्सेदारों के कारण भारी नुकसान उठाना पड़ा, लेकिन इस तरह की घटनाओं से घबराने की बजाय उन्होंने अपने आपको साबित करने का प्रण ले लिया। तमाम दिक्कतों के बावजूद भी वे आत्म विश्वास के साथ सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते चले गए। उन्होंने माइनिंग के बाद ट्रांसपोर्ट के क्षेत्र में भी कदम बढ़ाने का निर्णय लिया। कड़ी मेहनत व लग्न के बाद चौधरी मित्रसेन आर्य ने उड़ीसा, बिहार और छत्तीसगढ़ के नामी-गिरामी माइनिंग कारोबारियों में न केवल अपनी अलग पहचान बनाई, बल्कि उन्होंने मजदूरों को रिकार्ड तोड़ वेतन देकर जन कल्याण का नया रास्ता खोला। भारत सरकार

द्वारा '**कृषि विशारद**' की उपाधि से सम्मानित स्व. चौधरी मित्रसेन आर्य ने गुजरात भूकम्प से तबाह हुए दो गाँव को गोद लेकर उन्हें बसाने, तीन दर्जन से अधिक शिक्षण संस्थानों को आर्थिक व दूसरे पदार्थ की मदद देने, गो-सेवा में सराहनीय सहयोग देकर समाजसेवा के क्षेत्र में जो काम किया उसके चलते ये मानवता के लिए सदैव प्रेरक बन गए।

हिन्दी आन्दोलन में जेल– चौधरी मित्रसेन जी हिन्दी सत्याग्रह आन्दोलन के दौरान 1 अगस्त 1957 से 19 दिसंबर, 1957 तक हिसार जेल में बंद रहे।

'बुरा मत देखो, बुरा मत सुनो और बुरा मत बोलो' को अपने जीवन में ढाल कर आगे बढ़ने वाले चौधरी मित्रसेन जी आर्य हर बुरी बात या अन्याय को भूलकर, नई उमंग, नए उत्साह और नई दृष्टि से कदम-दर-कदम आगे बढ़ते रहे और नित नई मंजिलें छूते गए। उनका मानना था, 'हर नया सबेरा शुभकारक, मंगलदायक और नई प्रेरणा' देने वाला होता है। चौधरी मित्रसेन आर्य ने देश में लुप्त होने की कगार पर पहुँचे मूल्यवान् साहित्य को प्रकाशित करवाने में ऐसा योगदान दिया जो कि शायद ही कोई विरला कर पाया होगा। उन्होंने अनेक आध्यात्मिक ग्रंथों का प्रकाशन करवाया। यदि चौधरी साहब इस तरफ ध्यान नहीं देते तो ये मूल्यवान् आध्यात्मिक ग्रंथ शायद समय के गर्त में विलुप्त हो जाते। वास्तव में श्री चौधरी मित्रसेन जी आर्य एक व्यक्ति नहीं, स्वयं में संस्था थे।

वे हमेशा कहते थे कि '**मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे**' अर्थात् हम सब एक-दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें। सभी मनुष्यों को सर्वहित की भावना से, मित्रभाव से देखना और बरतना चाहिए। इसी में सबकी उन्नति है। किसी के दोष नहीं देखने चाहिएं। उसके गुणों को देखकर अपने पुरुषार्थ रूपी तप को बढ़ाते चले जाना चाहिए, इसी में सबका हित है।

चौधरी मित्रसेन एक योगी की तरह जीवन जीते हुए जीवन के 80वें वर्ष में रोगग्रस्त हो गए। 27 जनवरी, 2011 को उनकी इहलौकिक यात्रा समाप्त हुई व उनकी आत्मा दिव्य में विलीन हो गई। धन्य हैं ऐसे कर्मयोगी जिनका दिव्य जीवन हम सबके लिए प्रेरणादायी है।

अपने जीवन के अंतिम वर्षों से चौधरी मित्रसेन जी आर्य ने '**परम मित्र मानव निर्माण संस्थान**' के माध्यम से अपना जीवन पूरी तरह समाज को समर्पित कर दिया था। वे इस संस्था के जरिए जहाँ दुर्लभ और लुप्त हो रहे लोक साहित्य का प्रकाशन करवाते थे, वहीं जरूरतमंद और समाजसेवा में लगे विभिन्न संस्थानों को वित्तीय तथा अन्य सहयोग प्रदान करते थे। इसके साथ ही वे भारत समेत पूरे विश्व में योग और प्राणायाम के माध्यम से मानव समाज को नीरोग करने की मुहिम में जुटे योग ऋषि स्वामी रामदेव के मिशन को समर्पित थे।

●

स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका

– आशा रानी ब्होरा

शिवगंगा की वीरांगना

वेलुनाचियार

मद्रास में मारवाड़ों की राजधानी शिवगंगा। देवार वंश का राजप्रासाद। आधी रात का भयंकर सन्नाटा। मशालों की रोशनी में भाले और तलवार लिये पहरे पर खड़े द्वारपाल। राजपूत राजा मुथु बटुकनाथ देवार ने अंग्रेजों की सत्ता को चुनौती दे उनकी नींद हराम कर दी थी और कूटनीति के कुशल खिलाड़ी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गवर्नर ने क्षेत्र के कुख्यात डाकू कट्टू की पीठ ठोंककर मुथु बटुकनाथ की नींद छीन ली थी।

आततायी कट्टू शिवगंगा स्टेट में लूट-खसोट मचा रहा था। राजा बटुकनाथ पूरी शक्ति से उसका सामना कर रहे थे, लेकिन अंग्रेजों की मदद से वह बच निकलता था। दोनों ओर से चुनौतियाँ दी जा रही थीं। दुस्साहसी कट्टू ने चुनौती दी, ''एक दिन मैं शिवगंगा के राजमहल में आकर बेलु सहित राजगौरव हथिया लूँगा।'' उत्तर में बटुकनाथ ने भी घोषणा की, ''शिवगंगा का महल ही कट्टू की समाधि बनेगा।''

अर्धरात्रि का घंटा बजा। राजप्रासाद की दीवार पर पिछवाड़े से अंधेरे में एक काली आकृति ऊपर चढ़ती दिखाई दी। उसके दांतों में नंगी तलवार दबी हुई थी। लुकती-छिपती वह आकृति भीतर प्रांगण में उतर गयी और दबे पांव राज-कोष के द्वार तक भी पहुँच गयी। बड़ी सावधानी से भीतर जाकर उसने रत्नजटित मंजूषा में रखी राज-चिह्नांकित मुद्रिका निकाल ली और फिर उसी तरह दबे पांव बाहर निकल गई।

बेलु के कक्ष में अचानक खड़खड़ाहट हुई और दस्यु कट्टू हाथ में मुद्रिका लिये निर्लज्जता से हँसता हुआ वेलु के सामने प्रकट हो गया, ''मुझे पहचानती हो सुन्दरी?'' फिर हाथ की अंगूठी उसके सामने लहराकर बोला, ''अब तो जरूर पहचानोगी! तुम बहुत दिनों से मेरी उपेक्षा करती आ रही हो, लेकिन अब देवार वंश का राज-चिह्न मेरे हाथ में है। शिवगंगा स्टेट का शासक आज से मैं हूँ....मैं.....कट्टू।''

पर वेलु न डरी, न घबरायी। उत्तर में उसने घृणा से होठ बिचका दिये और बोली, हाँ खूब पहचानती हूँ तुम्हें! गुंडे देशद्रोही, याद रखो मारवाड़ों के पवित्र सिंहासन पर कभी चोर-लुटेरे नहीं बैठे।''

दस्यु ने क्रोध से फुफकारते हुए कहा, ''दुष्ट सुन्दरी, यदि मैं इस मुद्रिका की तरह तेरा भी अपहरण कर लूँ तो?''

''करके देखो! मेरी कमर में भी तलवार है। देखती हूँ कि तू मेरा अपहरण करता है या मैं तेरे रक्त से खेलती हूँ?''

कट्टू क्षणभर को ठिठका, फिर बिजली की गति से उसने वेलु को पकड़ उसके हाथ, पैर और मुँह बाँध दिये। उसे लेकर तेजी से कुँज की आड़ में छिपे

घोड़े पर जा बैठा और उसने तूफानी चाल से घोड़ा दौड़ा दिया। पलक झपकते ही यह सब हो गया। वेलु को अपनी कमर से तलवार निकालने तक का मौका उसने नहीं दिया था। जब वह होश में आयी, तो विस्फारित नेत्रों से चारों ओर देख स्थिति का जायजा लेने लगी। कट्टू उसे घोड़े की पीठ पर बैठाये सरपट भागा जा रहा था। जब उसकी नजर वेलु की भय-चकित नजर से मिली, तो वह जोर से अट्टहास करता हुआ बोला, ''तुम्हें विस्मय क्यों हो रहा है? मैंने कहा था न, कट्टू जिस वस्तु की इच्छा करता है, उसे पाकर ही छोड़ता है..... तुम्हें अपनी गुफा में पहुँचाकर मैं जल्दी ही लौट आऊँगा और तुम्हारे अभिमानी प्रणयी बटुकनाथ का सिर लाकर तुम्हें भेंट करूँगा।''

वेलु आगे न सुन सकी। उसने घृणा से नजर फेर ली। थोड़ी देर बाद उसने फिर देखा, कट्टू अपनी धुन में मस्ती से ऊंघता-सा भागा जा रहा था। धीरे-धीरे प्रयत्न करके वेलु ने अपने हाथों का बंधन ढीला किया। कट्टू की कमर से लटकती तलवार एक झटके से खींची और अगले ही क्षण उसे कट्टू के सीने में उतार दिया। दस्यु एक कराह के साथ घोड़े से गिरा और निष्प्राण हो गया। वेलु ने नीचे उतर उसकी उंगली से राज-मुद्रिका निकाली और वापस घोड़े पर बैठ अपने प्रासाद में लौट आयी।

वीरांगना वेलु की विजय की खुशी में बटुकनाथ ने उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। वेलु ने खुशी से स्वीकार किया और दूसरे दिन सैनिक छावनी बना वह नगर विवाह-मंडप में बदल गया। राजकीय धूम-धाम व सम्मान से विवाह सम्पन्न हुआ। लेकिन मिलन की गंध-बेला में देशभक्त बटुकनाथ ने साहस बटोरकर अपनी नव-विवाहिता वेलु के सामने गम्भीर स्वर में एक प्रस्ताव रखा, ''देखो वेलु, मैंने तुम्हारे शौर्य और तेज को वरा है। जब तक कंपनी सरकार की सेना का विनाश कर मैं स्वतंत्रता-संग्राम में विजयी न हो जाऊं, तब तक तुम्हारे शरीर का वरण नहीं कर सकूँगा। आशा है, तुम मुझे क्षमा कर दोगी और इस मुक्ति-युद्ध में मेरा साथ दोगी।''

वेलु भावविभोर होकर बोली, मैं कृतार्थ हुई। आपने तो मेरे हृदय की बात कह दी है। देश और राज्य की रक्षार्थ कम्पनी सरकार से लोहा लेने के लिये मैं कुछ कर सकी, तो यह मेरा सौभाग्य होगा।

कंपनी शासन ने कट्टू की मौत और बटुकनाथ-वेलु के विवाह के बारे में सुना, तो बदला लेने की तैयारी कर ली। अंग्रेज कलेक्टर जैक्सन और बोंजोर एक बड़ी फौज लेकर शिवगंगा की ओर चल दिये। बटुकनाथ के गुप्तचरों ने कंपनी सेना के कूच की खबर दी, तो यह अवसर पाकर बटुकनाथ-वेलु दोनों खुशी से झूम उठे। उन्होंने अपने दो चतुर सामंतों को बुलाकर जैक्सन और बोंजोर को सबक सिखाने का आदेश दिया। कंपनी सेना कूच करती हुई बेगाई नदी के किनारे पहुँची, तो सामंतों के सिखाये चतुर मल्लाहों ने आगे बढ़ उनका स्वागत किया और कंपनी लश्कर को नदी पार उतारने का ठेका ले लिया। अपने अस्त्र-शस्त्र सहित फिरंगी सेना दो बड़ी नावों पर सवार हुई। मंझदार में जाकर दोनों मल्लाहों ने एक-दूसरे को इशारा किया, नावें भंवर में फंसाई और अगले ही क्षण उन्हें एक-दूसरे से टकरा दिया। सारी सेना

देखते-देखते काल के गाल में समा गयी। दोनों सेनापति किसी तरह बचकर निकल भागे।

इस दुर्घटना की सूचना पाकर कंपनी शासक तिलमिला उठा और मद्रास से और कुमुक मंगाई गयी। देशभक्त मारवाड़ों और कंपनी सेना में मुठभेड़ें होने लगी। एक अंधेरी रात को जब बटुकनाथ शिकार पर गया हुआ था, उस की अनुपस्थिति में कंपनी फौज ने शिवगंगा को घेर लिया। सिंह के गुफा से बाहर जाने पर गीदड़ों का धावा हुआ था, लेकिन सिंहनी अब भी गुफा में थी। वीरांगना वेलुनाचियार अपनी सेना लेकर कंपनी फौज पर टूट पड़ी। दो घंटे की लड़ाई में जैक्सन और बोंजोर घबरा उठे। अपने घोड़े पीछे मोड़कर वे भाग निकले। वीर मारवाड़ों की भयंकर मार से उनकी सेना के भड़ैत तिलंगे भी तितर-बितर हो गये। शिवगंगा की वीरांगना वेलुनाचियार की वीरता की और धाक जम गयी।

इसी बीच बटुकनाथ को भी सूचना मिल चुकी थी। वह तूफानी गति से आया और अंग्रेज सैनिकों को रौंदता चला गया। कुछ समय के लिए शान्ति हुई। फिर अचानक एक और अंधेरी रात को जैक्सन ने नयी कुमुक लेकर शिवगंगा को घेर लिया। इस बार मुकाबला अधिक कड़ा था। एक ओर जैक्सन की उन्नत हथियारों वाली विशाल सेना, उनका बड़ा तोपखाना, दूसरी ओर बटुकनाथ की कम सज्जित मुट्ठी भर सेना! फिर भी, बहादुर देशभक्त बटुकनाथ ने सामना करने की ठानी। कई महीनों तक कंपनी की सेना एक इंच भी आगे न बढ़ सकी। अंत में देशद्रोही कट्टू का भाई आगे आया और उसने पैसे के लालच में जैक्सन को गढ़ का गुप्त मार्ग बता दिया।

फिर आयी वह अंधेरी रात, जब हुर्रा-हुर्रा की आवाजों के बीच आग उगलती तोपों की गड़गड़ाहट से अजयगढ़ की दीवारें कांप उठीं। बारूदी लपटों में वीरांगना वेलु और वीर बटुकनाथ को रोमांचक बलिदानी खेल खेलना पड़ा। अपने मुट्ठी भर सैनिकों को लेकर बटुकनाथ जैक्सन की विशाल सेना का सामना करने के लिए आगे बढ़ा। उसका एक अंग कट जाने पर भी वह अंतिम क्षण तक लड़ता रहा। फिर उसकी आज्ञा से उसके वीर सेनापति दीवान ने उसका सिर काट लिया, परन्तु वेलु ने अभी हार नहीं मानी थी। पति का सिर हाथ में लेकर वह चंडी वेश में सेना पर टूट पड़ी। खचाखच तलवार चलाते उसका भयानक रूप देख उसके हारते सैनिकों में नया जोश भर गया। तभी सामने पड़ गये सेनापति जैक्सन पर उसने बिजली की गति से वार किया। एक ही वार से जैक्सन का दाहिना हाथ उड़ गया।

लेकिन वेलु के मुट्ठी भर सैनिकों की हार अब निश्चित थी। इसका अनुमान लगा वह अपने सैनिकों के साथ डिडिंगल की ओर चल पड़ी। डिडिंगल अंग्रेजों के जन्मजात शत्रु टीपू सुलतान का गढ़ था। मैसूर का यह नाहर उन दिनों तमिलनाडु और मदुरई से कंपनी का शासन समाप्त करने में अपनी पूरी शक्ति लगा रहा था। शिवगंगा की वीरांगना वेलुनाचियार टीपू सुलतान के दरबार में पहुँची, तो उसने आगे बढ़ पूरे सम्मान के साथ उसका स्वागत किया। टीपू सुलतान ने जब वेलु को राजेश्वरी कह कर उसका अभिवादन किया और बहन कहकर भाई की ओर से

हर तरह की मदद का आश्वासन दिया, तो पहली बार वेलु की आँखों में आँसू भर आये। बोली, ''पहले आप इसके परिणाम पर विचार कर लें। मुझे शरण देने का बदला आपसे जरूर लिया जायगा।'' टीपू सुलतान ने नजर और वाणी में अंगारे भरकर उत्तर दिया, ''जब तक मारवाड़ों की धरती पर अपनी वेलु बहन का झंडा वापस नहीं लहराता, शाह-ए-मैसूर तब तक चैन से नहीं बैठेगा।''

दो साल बाद जीत की खुशी में जैक्सन शिवगंगा के महल में बोंजोर के साथ ऐशो-आराम में मस्त था। वेलु के गुप्तचर एक-एक करके महल के सेवक बनकर महल में भरते जा रहे थे। आक्रमण के लिए 'क्रिसमस नाइट' को चुना गया था। चिर प्रतीक्षित आधी रात का समय। अंग्रेज सैनिक मदिरापान में डूबे थे। महल के प्रांगण में नूपुर बज रहे थे और भीतर सैनिकों के रूप में तैनात वेलु के योद्धा अपनी तलवारें भांज रहे थे। कुछ देर घमासान युद्ध चला। नशे में डूबकर कमजोर पड़े सैनिकों ने विवश होकर हथियार डाल दिये। शिवगंगा के राजघराने की विजय का सेहरा तीसरी बार वेलु के सिर पर बंधा।

अगले दिन राजमहल में वेलुनाचियार के राज्याभिषेक की तैयारियाँ हो रही थीं। समय पर दीवान वेलु को खोजता हुआ महल के प्रांगण में पहुँचा, तो देखकर दंग रह गया कि वेलु वीर बटुकनाथ की समाधि पर सिर टेके बैठी थी और उसके प्राण-पखेरू उड़ चुके थे।

1857 के प्रथम संगठित मुक्ति-युद्ध से पूर्व देश भर की आजादी के लिए कंपनी सरकार से लोहा लेने वाली शिवगंगा की वीरांगना वेलुनाचियार का काम रानी चेनम्मा से किसी तरह कम नहीं है। पर वेलुनाचियार की कहानी बहुत कम प्रकाश में आई है। ●

'**महिलाएँ और स्वराज्य**' पुस्तक से साभार

(इतिवृत्तम् का शेष भाग)

इस वैदिक ज्योति के मशाल को प्रज्वलित रखने में जिन्होंने अपना अमूल्य आर्थिक सहयोग प्रदान किया है उनके नाम हैं–

श्री वसंतराय चतुरलाल तन्ना अहमदाबाद, श्री सुयश अग्रवाल जी मेरठ, श्री शिवकुमार अग्रवाल मेरठ, श्रीमती मिथिलेश कुमारी एवं श्री मूलचन्द जी मित्तल, आर्यसमाज साकेत मेरठ, आर्य स्त्री समाज मेरठ, श्रीमती आशा वर्मा पटेलगनर नई दिल्ली, श्री सूर्यदेव आर्य नई दिल्ली, अनिल वर्मा दिल्ली, संगीता मेंदीरत्ता-स्नेहलता कुमार नई दिल्ली, श्री कृष्णलाल जी डंग बदरीपुर, श्री भरत अग्रवाल अहमदाबाद, श्री मणिलाल जी हैदराबाद, श्रीयुत तरुण-वरुण कुकरेजा नई दिल्ली, माता शान्ता चड्ढा-श्रीमती रेणु आर्या दिल्ली, श्री रजनीश कपूर दिल्ली, श्री विश्वनाथ जी त्रिपाठी वाराणसी, श्री भूदेव प्रसाद एवं श्रीमती ऊर्मिला देवी जी वाराणसी, श्रीमती विमला गुलाटी दिल्ली, श्री शिवकुमार अग्रवाल दार्जिलिंग, आर्यसमाज काकड़वाड़ी मुम्बई, श्रीमती सूर्यमुखी सदाशिव जायसवाल जी 'एडवोकेट' महू, श्री कैलाश जी अग्रवाल महू, श्री रवि जी आर्य-श्री कंचन सिंह जी महू आदि। आप सबके श्रद्धापूर्ण सहयोग से ही यह महाविद्यालय सतत गतिमान् है आप सबका सहयोग हमारे लिये अमूल्य है, हम आपके आभारी हैं। ●

सामान्य रोगों की सुगम चिकित्सा

– डा० अजीत मेहता

सिर में रूसी या सीकरी (Dandruff)

नारियल का तेल 100 ग्राम, कपूर 4 ग्राम दोनों को मिलाकर शीशी में रख लें। दिन में दो बार-स्नान के बाद केश सूख जाने पर और रात में सोने से पहले सिर पर खूब मालिश करें। दूसरे ही दिन से रूसी (सफेद पतली भूसी की तरह) में लाभ प्रतीत होगा।

इस तेल के प्रयोग से बालों में जूं पैदा नहीं होती।

विकल्प– (1) बाल धोने से आधा घंटा पहले एक नींबू काटकर मलने से या नींबू का रस मलने से और फिर हल्के गर्म पानी से धोने से सिर की रूसी साफ हो जाती है और रूखे-सूखे बाल चमकदार व सैट हो जाते है अथवा दो-चार किलो पानी में दो नींबूओं का रस निचोड़कर एक सप्ताह तक प्रतिदिन बालों को अच्छी प्रकार धोएँ तो जुएं न रहेंगी। बाल चमक उठेंगे। रूसी दूर हो जायेगी। (2) नारियल के तेल में तेल से आधा नींबू का रस तथा जरा सा कपूर मिला लें। रात में तेल बालों की जड़ों में लगाकर हल्की-हल्की मालिश करें और प्रातः स्नान कर कंघी करें। रूसी समाप्त होने के साथ-साथ जूं भी नहीं रहेगी। (3) रीठे का शैम्पू रूसी में उतना ही कारगर है जितना कोई आधुनिक फार्मूले का शैम्पू। बाल टूटने पर बालों को साबुन से न धोकर रीठे से धोना चाहिये। बाल टूटते हैं तो हर चौथे रोज सिर धोइए।

रीठे के शैम्पू की विधि– रात में रीठे के छिलके के छोटे-छोटे टुकड़े करके पानी में भिगो दें। (अनुपात-एक हिस्सा रीठा का छिलका, चालीस हिस्सा पानी)। सुबह उस पानी को मसलकर अथवा उबालकर उससे सिर धोने से बाल लम्बे और घने होते हैं। इसके लिए बालों को पहले थोड़ा गुनगुना पानी डालकर धोइए। उसके बाद रीठे के पानी के घोल की आधी मात्रा सिर पर डालकर बालों को पांच दस मिनट तक मलिए। अब इसे धो डालिए। फिर आधा बचा हुआ शैम्पू पहले की तरह डालकर मलिए अच्छी तरह मलने के बाद धो डालिए।

कैश सौन्दर्य–

(क) असमय बाल सफेद होना– भृंगराज (भांगरा) का खूब कूट पीसकर बारीक बनाया हुआ चूर्ण और काले तिल (साबुत) दोनों बराबर मात्रा में मिलाकर रख लें। नित्य सूर्योदय के समय मुंह शुद्धि के पश्चात् इस मिश्रण को एक चम्मच की मात्रा से खूब चबाकर खाएं और ऊपर से ताजा पानी पी लें। लगातार छः मास के प्रयोग से समय से पहले बालों का पकना और झड़ने की शिकायतों से छुटकारा मिल जाता है। साथ ही केश काले, घने, लम्बे, मजबूत और चमकदार बने रहते हैं। यह परम्परागत अनुभूत प्रयोग चालीस साल तक की आयु वाले

व्यक्तियों के लिए अत्यन्त सफल रहा है।

विशेष– (1) **भृंगराज सूखा, काले तिल, सूखा आंवला, मिश्री–** चारों बराबर मात्रा में लेकर बनाये गये चूर्ण को नित्य प्रातः छः ग्राम की मात्रा से खाकर ऊपर से 250 ग्राम दूध पीएं। ब्रह्मचर्य पालन के साथ एक वर्ष तक निरन्तर सेवन करने से कायाकल्प होता है। (2) **दही का शैम्पू–** साबुन के स्थान पर 100 ग्राम दही में एक ग्राम काली मिर्च बारीक पिसी हुई मिलाकर सप्ताह में एक बार सिर धोएं और फिर गुनगुने पानी से अच्छी तरह बाल धो डालें। इससे बाल काले होते हैं, झड़ने बन्द होते हैं और बालों का सौन्दर्य खिल उठता है। बालों के दो सिरे हो गए हों तो बाल बढ़ाने के लिए बालों को नीचे से लगभग आधा इंच काट देना चाहिए।

(ख) **मटियाले बालों को कजरारे बनाने के लिए नींबू का शैम्पू–** यदि आपके बालों का रंग चूहे के समान मटियाला हो गया हो तो आप दो नींबू का रस निचोड़कर उसमें दो कप गर्म जल डालें। बालों को गीला करने के बाद इस नींबू के शैम्पू को सिर में डालकर रगड़ें। तत्पश्चात् पानी से सिर न धोएं बल्कि तोलिए से बालों को सुखा डालें। कुछ देर हल्की सूर्य की धूप में बैठकर कंघी से केश संवारें। सप्ताह में दो-तीन बार ऐसा करते रहने से आपके बाल स्वाभाविक रूप से काले हो जाएँगे।

सहायक उपचार– (1) नींबू के छिलकों को नारियल के तेल में डुबोकर आठ-दस दिन धूप में रख दें। फिर इसे छानकर बालों की जड़ों में रगड़िए। केश काले और घने होंगे। (2) नारियल के तेल 300 ग्राम में काली मिर्च (मोटी कुटी हुई) तीन ग्राम (एक चम्मच) डालकर गर्म कर लें। उबाल जैसा गर्म हो जाने पर स्वच्छ कपड़े से छानकर शीशी में भर लें। रात्रि-सोने से पहले बालों की जड़ों में उंगलियों के सिरों से हल्के-हल्के मालिश करें। बालों की कालिमा कायम रहेगी।

(ग) **बालों में चमक और आभा उत्पन्न करने के लिए अन्त में धोना (Final rinse)–** बाल धोते समय शैम्पू या साबुन से सिर साफ करने के बाद अन्त में एक गिलास गुनगुने पानी (सर्दियों में) या सादे पानी (गर्मियों में) एक नींबू का रस अथवा सिरके की कुछ बूँदें मिलाकर बालों पर डालकर सिर धो लें। इससे केश रेशम से चमकदार सुन्दर, कोमल और हेयर कन्डीशनर की तरह सेट हो जाते हैं। धीरे-धीरे रूसी भी ठीक हो जाती है और बाल जल्दी गन्दे नहीं होते। इससे थोड़े बहुत बच गए शैम्पू या साबुन के झाग भी दूर हो जाते हैं और बालों को नवीन आभा प्राप्त होती है।

21. बालों के सौन्दर्य-निखार के लिए स्वदेशी शैम्पू– (1) **मुल्तानी मिट्टी का शैम्पू–** मुल्तानी मिट्टी 100 ग्राम एक कटोरे में लेकर पानी में भिगो दें। जब दो घंटे में यह फूलकर लुगदी सी बन जाए तो हाथ में मसलकर गाढ़ा घोल बना लें। डलियाँ न रहने पाएं। इस गाढ़े घोल को सूखे बालों में ही

डालकर मुलायम हाथों से धीरे-धीरे रगड़ें। पाँच मिनट पश्चात् सर्दियों में गुनगुना और गर्मियों में ठंडे पानी से धो लें। यदि बाल अधिक मैले हैं तो दुबारा वैसा ही करें। इस प्रकार साबुन की जगह मुल्तानी मिट्टी से बाल सप्ताह में दो बार धोने से उसमें अपूर्व निखार आता है और बाल रेशम के समान मुलायम एवं लम्बे होते हैं। पहली बार धोने के बाद ही सिर में ऐसा हल्कापन और शीतलता का अनुभव होता है, जैसा किसी अन्य शैम्पू से नहीं मिलता।

(2) बेसन का शैम्पू– साबुन के स्थान पर सप्ताह में दो बार बेसन को पानी में भली प्रकार घोलकर बालों में लगाएं और फिर एक घंटे बाद धो लें। ऐसा करने से बाल घने और काले होंगे। बालों की हर प्रकार की गन्दगी साफ होकर वे चमकीले और मुलायम होंगे। सिर की खाज व फुन्सियाँ भी जल्दी ठीक होंगी।

बालों का गिरना

केशों के झड़ने या टूटने पर सिर में नींबू के रस में दो गुना नारियल का तेल मिलाकर उंगलियों की अग्रिम पोरों में आहिस्ता-आहिस्ता केशों की जड़ों में मालिश करने से आपके केश झड़ने बन्द हो जाएंगे। साथ ही केश मुलायम व सीकरी मुक्त हो जाएंगे तथा बालों से सम्बन्धित अन्य रोग भी दूर हो जाएंगे।

विशेष– खोपड़ी की खुश्की-रूसी की दशा में नारियल के तेल में नींबू का रस मिलाकर रात को खोपड़ी में मलें और सुबह गुनगुने पानी या रीठे के पानी से सिर धो डालें। दो-चार बार करने से ही सिर की खुश्की और रूसी नष्ट हो जाती है।

लम्बे और रेशमी केशों के लिए केश शैम्पू

शिकाकाई और सूखा आंवला प्रत्येक 25-25 ग्राम लें। थोड़ा कूटकर टुकड़े (यवकूट) कर लें। रात को इन्हें 500 ग्राम पानी में डालकर भिगो दें। प्रातः इस पानी को मसलकर, कपड़े से छान लें और सिर पर मलें। दस-बीस मिनट बाद स्नान कर लें। इस प्रकार शिकाकाई और आंवलों के पानी से सिर धोकर और केश सूखने पर नारियल का तेल लगाने से केश लम्बे, घने, रेशम की तरह मुलायम और चमकदार हो जाते हैं।

विशेष– गर्मियों में यह प्रयोग अनुकूल रहता है। इससे केश सफेद नहीं होने पाते और यदि सफेद होने लगें तो सफेद बाल काले हो जाते हैं।

सहायक उपचार– आधी या एक मूली रोजाना दोपहर में भोजन के बाद काली मिर्च तथा नमक लगाकर खाने से बाल लम्बे होंगे और रंग साफ होगा। तीन-चार महीने लगातार खायें। एक महीने तक इसका इसी तरह सेवन करने से कब्ज, अफारा और अरुचि में आराम होता है। अनुकूल होने पर ही यह प्रयोग चालू रखें क्योंकि मूली किसी-किसी को अनुकूल नहीं आती।

● **'स्वदेशी चिकित्सा सार'** पुस्तक से साभार

हम भारत से क्या सीखें?

द्वितीय भाषण

– प्रो0 मैक्समूलर

हिन्दुओं का चरित्र–

अपने इस द्वितीय भाषण के क्रम में मैंने जो कुछ कहा है उससे इतना तो आप समझ ही गये होंगे कि हिमालय से लेकर लंका तक के हिन्दुओं के प्रति हमारे लोगों के मन में जो एक प्रकार की दुर्भावना बद्धमूल हो गयी है, मैं उसे हटा देने का प्रयत्न कर रहा हूँ। यह सत्य है परन्तु मेरे इस प्रकार के प्रयत्न का ऐसा अर्थ लगा लेने की भूल आप लोग न कर बैठें कि मैं भारत का एक आदर्श रूप आप लोगों के समक्ष उपस्थित करने जा रहा हूँ, जिसकी सभी कालिमाएँ धो-पोंछ कर साफ कर दी गयी हों और जिसमें केवल अपरिमित माधुर्य व प्रकाश मात्र ही दिखाया गया हो। मैं स्वयं कभी भारत नहीं गया हूँ अतः मैं केवल इतिहास कर्त्ताओं के अधिकार एवं कर्तव्य मात्र पालन करने का दावा कर सकता हूँ और वह अधिकार यह है कि किसी भी विषय का विवरण प्रस्तुत करते हुए उसके सम्बन्ध की सभी प्राप्त सूचनाओं को एकत्रित कर लिया जाय। सूचनाओं को एकत्रित कर लेने के बाद इतिहास लेखक का कर्तव्य हो जाता है कि ऐतिहासिक समालोचना के नियमों के अनुसार उन्हें क्रम से सजा कर पाठकों के हाथों में दें। सुदूर अतीत कालीन हिन्दुओं के चरित्र का विवरण प्रस्तुत करते हुए मैं उसी अधिकार एवं उसी कर्तव्य का पालन मात्र कर रहा हूँ और इस कार्य के लिए मुझको यूनानी लेखकों एवं भारतीय विद्वानों की कृतियों का सहारा लेना पड़ेगा। अर्वाचीन भारत के लोगों के चारित्रिक विवरण देने के लिये हमें अवश्य ही उन विजयिनी जातियों के लेखकों का सहारा लेना पड़ेगा जिन्होंने हिन्दुओं को जीतना अपेक्षाकृत सरल पाया परन्तु उन पर शासन करने में जिन्हें अभूतपूर्व कठिनाइयों की अनुभूति हुई। पिछली सदी के प्रारम्भ से वर्तमान तक का विवरण प्रस्तुत करने के लिए हमें कुछ तो सहारा लेना पड़ेगा उन महानुभावों का जो कुछ वर्षों तक भारत एवं भारतीयों में प्रशासनाधिकारी या सैनिक अधिकारी के रूप में रहे हैं और वहाँ से लौटने के पश्चात् अपने भारत एवं भारतीय सम्बन्धी अनुभवों को पुस्तकाकार छपवा कर हम सबको लाभान्वित किया है तथा कुछ सहारा हमें उन भारतीय मित्रों का भी लेना पड़ेगा जिनकी व्यक्तिगत मित्रता तथा जिनके व्यक्तिगत परिचय का रसास्वादन करने का अवसर मुझे इंग्लैंड, फ्रांस तथा जर्मनी में मिल चुका है।

यहीं पर मुझे इस बात को भी स्पष्ट कर देना चाहिये कि चूँकि मैं उन लोगों के सामने बोल रहा हूँ, जो अति निकट भविष्य में भारत के शासक व प्रशासक होंगे। अतः मैं आप सब से अनुमति मागूँगा कि मुझे उन थोड़े से भारतीय नागरिक एवं सैनिक सेवा के विशिष्ट अधिकारियों को उद्धृत करने दें जो लम्बे समय तक भारत में रह कर वहाँ का एवं उनके

निवासियों का सूक्ष्म अध्ययन कर चुके हैं और अपने अध्ययनकाल में जिन्होंने न तो अपना विवेक खोया है और न संयम तथा जिनकी विचार पद्धति किसी भी पूर्वगामी लेखक के विचारों से दूषित नहीं हुई है। सौभाग्य से उन लोगों ने भी इस विषय को हाथ में लिया है जिस पर हम इस समय विचार कर रहे हैं। अर्थात् उन्होंने भी भारतीयों की सत्य प्रियता या असत्य प्रियता पर अपना विचार प्रगट किया है।

जब मैं पहले-पहल इंग्लैण्ड आया तो बहुत से ऐसे लोगों को जानने, उनसे परिचित होने एवं उनमें से कितने ही से मित्रता स्थापित करने का सौभाग्य व आनन्द मुझे मिला जो ईस्ट इंडिया कम्पनी की अधीनस्थ भारतीय सेना में भारत जाकर तथा वहाँ कुछ वर्षों तक रह कर इस देश में लौटे हैं। उनकी बातों से मुझे पता चला कि उन्होंने नेटिव लोगों को समीप से देखा और परखा है। उन लोगों ने उनको उनके शिष्टाचार को तथा उनकी चारित्रिक विशेषताओं का अध्ययन उन लोगों से अधिक गम्भीर रूप में किया है जो अभी केवल पचीस वर्ष पूर्व यहाँ से पास होकर गये हैं और इतने दिनों में नाम व धन कमाकर अब स्वदेश को लौट रहे हैं। एक जमाना था कि भारत हमसे बहुत दूर था, उस समय किसी भी अंग्रेज का भारत जाना प्रकारान्तर से निर्वासन ही माना जाता था, परन्तु आज वैसी दशा नहीं है। आज के तेज चलने वाले जहाजों के कारण इंग्लैंड एवं भारत के बीच की जलयात्रा छोटी और सुविधा पूर्ण हो गयी है। आज की डाक व तार व्यवस्था की उपस्थिति में भारत हमारे काफी समीप आ गया है। अब हमारे लिए भारत वह भारत नहीं रह गया है जहाँ पर राविंसन क्रूसो को अपने लिये सभी सुविधाओं की व्यवस्था स्वयं करनी पड़ती थी। अभी पचास वर्ष पूर्व किसी भी अंग्रेज कामिनी को भारत जाने का साहस नहीं होता था, परन्तु अब वे भी भारत प्रवास के आनन्द में भाग बँटाने का साहस करने लगी हैं। अब भी हमारे देश के लोग भारत प्रवास को निर्वासन ही मानते हैं परन्तु अब उस निर्वासन का कष्ट स्वयं उनकी दृष्टि में भी अत्यधिक कम हो गया है। मेरे कहने का तात्पर्य केवल इतना है कि अब भी एक प्रकार की विवशता के कारण ही भारत जाने को तैयार होते हैं। अभी तक भारत जाने का चाव लोगों में उत्पन्न नहीं हुआ है और यदि हुआ भी है तो वह अपर्याप्त है। यह एक कठिनाई है, जिसे दूर तो अवश्य नहीं किया जा सकता परन्तु सफलतापूर्वक उसका सामना किया जा सकता है और इसका सामना करने में तभी सफलता मिल सकती है जब भारत में जाने वाले लोगों के उद्देश्य महान् हों, रुचियाँ परिष्कृत हों एवं उनका दृष्टिकोण विस्तृत हो।

मैं स्वर्गीय प्रोफेसर विल्सन को जानता हूँ, जो आक्सफोर्ड में हमारे संस्कृत के प्रोफेसर थे। उन्होंने उक्त पद पर काफी दिनों तक रह कर अध्ययन कार्य किया था। जब कभी वे अपने भारत सम्बन्धी संस्मरण सुनाने लगते थे तो आत्मविभोर हो उठते थे और हमें भी उनकी बातें सुनते-सुनते आत्मविस्मृत हो जाना पड़ता था। ●

हिन्दी अनुवाद– **श्री कमलाकर–रमेश तिवारी**

(शेष अगले अंक में)